स्वामी सत्यानंद सरस्वती द्वारा रचित संस्थाएँ

1. अंतर्राष्ट्रीय योगा फैलोशिप मूवमेंट
   International Yoga Fellowship Movement (IYFM), 1956
2. बिहार स्कूल ऑफ योगा
   Bihar School of Yoga (BSY), 1963
3. शिवानन्द मठ
   Shivanand Math (SM), 1984
4. योग रिसर्च फाऊन्डेशन
   Yoga Research Foundation (YRF), 1984
5. श्री पंचदशनाम परमहंस अलखबाड़ा
   Sri Panchdashnam Paramhansa Alakhbara (PPAB), 1989
6. बिहार योग भारती
   Bihar Yoga Bharati (BYB), 1994
7. योग पब्लिकेशन ट्रस्ट
   Yoga Publication Trust (YPT), 2000
8. शिवानन्द आश्रम
   Shivanand Ashram (SA), 2006
9. रिखिया पीठ
   Rikhia Peeth, 2007

ध्यान मूलं गुर्रोमूर्ति, पूजामूलं गुर्रोपदं
मंत्र मूलं गुर्रोवाक्य, मोक्षमूलं गुर्रोकृपा

सहकारी मुद्रणालय एवं प्रकाशन संस्थान मर्यादित, सेक्टर–10, भिलाई से मुद्रित

मेरे सद्गुरु
परमहंस स्वामी सत्यानंद

" जब तुम दूसरों के बारे में सोचते हो तो ईश्वर तुम्हारे बारे में सोचता है। दूसरों की मदद करना ईश्वर प्राप्ति का सबसे सरल उपाय है।"

— स्वामी सत्यानंद

— प्रीति अग्रवाल —

GYAN YAGYA WELFARE SOCIETY PUBLICATION

जीवन के दुर्गम पथ पर संघर्षरत पथिक के लिए ज्योतिर्मय महान व्यक्तियों का जीवन एवं उनके कार्य अनवरत प्रेरणा एवं नवचेतना के स्थायी स्त्रोत हैं। संतों और ऋषियों की दैनन्दिन प्रवृत्तियाँ एवं शिक्षाप्रद सम्भाषण भ्रमित पथिकों के लिए अतीव सहायक हैं।

— **स्वामी चिदानन्द**

संत्संग प्रेमियों के लिये :

श्री स्वामी सत्यानंद के सत्संग और मेरे अन्य कई लेखों के लिए मेरे वेबसाइट पर लॉगऑन करिए। आप मुझे संदेश भी ब्लॉग के द्वारा भेज सकते हैं।

http://gyanayagya.weebly.com
http://pritiyoga.blogspot.com

यह 15वीं ज्ञान पुष्प माला, मैं परम गुरु श्री स्वामी शिवानंद के ज्ञान यज्ञ में सादर समर्पित करती हूँ।

प्रथम संस्करण : मार्च 2010

(1500 प्रति ज्ञान यज्ञ हेतु निःशुल्क वितरणार्थ)

कवर — स्वामी सत्यानन्द के चरण कमल

सुश्री प्रज्ञा नैयर द्वारा रेखांकित

जन्मकर्मविलीनकारणहेतुभूतमभूतकं
जन्मकर्मनिवारकं रूचिपूरकं भवतारकम् ।
नामरूपविवर्जितं निजनायकं शुभदायकं
प्रातरेव हि मानसे गुरुपादुकाद्वयमाश्रये।।

आभार

स्वर्गीय श्रीमती लक्ष्मी देवी जी की पुण्यतिथि पर इस पुस्तक के प्रकाशन की सेवा मुख्यतः उनके पौत्र **श्रीमान अदित अग्रवाल** द्वारा की गई है। अन्य दानदाताओं की भी मैं कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया इस परम पुनीत ज्ञान यज्ञ में। परमपूज्य श्री स्वामी शिवानन्द का अनुग्रह एवं भगवत्—कृपा सब दानदाताओं पर सदा बनी रहे। उन्हें स्वास्थ्य, सुख—शांति एवं दीर्घायु प्राप्त हो तथा इनकी आध्यात्मिक उन्नति हो।

अब तक छप चुकी पुस्तिकाओं की सूची :—

क्र.	नाम	प्रतियाँ
1.	सत्संग	1500
2.	बच्चों के लिए योग का महत्व	1000
3.	संतों के जीवन से सच्ची कहानियाँ	1500
4.	परमगुरु स्वामी शिवानंद — एक श्रद्धांजली	1000
5.	एक आटोबॉयोग्राफी (अँग्रेजी में)	1000
6.	रोग और मैं	2000
7.	गुरु एक तत्व	2000
8.	मेरी कहानी मेरी जबानी	1000
9.	गृहस्थों के लिए योग साधना	1000
10.	आज की त्रासदी	1000
11.	स्त्री एक शक्ति	1000
12.	मेरी आध्यात्मिक यात्रा	1000
13.	मेरा संघर्ष	1500
14.	क्या पाया मैंने अध्यात्म से	1500

आदि लक्ष्मी मेडिकल स्टोर,
सेक्टर-6, भिलाई - 490 006

ॐ

यह पुस्तिका परम गुरु स्वामी शिवानन्द की दिव्य प्रेरणा और परमहंस स्वामी सत्यानंद के असीम अनुग्रह की परिणिति है। विश्व के प्रथम योग विश्वविद्यालय ''बिहार योग भारती'' के पूर्व परमाचार्य परमहंस स्वामी निरजंनानंद सरस्वती इस लेखन का मार्गदर्शन कर रहे हैं। परम गुरु स्वामी शिवानंद के ज्ञान यज्ञ की यह 15 वीं कड़ी है, इस्पात नगरी भिलाई नगर में, जिसका मुख्य उद्देश्य है आध्यात्मिक ज्ञान का निःशुल्क वितरण लोक स्वास्थ्य एवं लोक कल्याण के लिए। इस पुस्तिका का वितरण इन्टरनेट से, डाक से अथवा अनेक भक्तों के माध्यम से देश विदेश में नियमित रूप से किया जा रहा है। परमगुरु स्वामी शिवानन्द के ऋषिकेश आश्रम के पुस्तकालय में इन पुस्तिकाओं का एक सैट रखा गया है। देश–विदेश के अन्य अनेक पुस्तकालयों में भी इन पुस्तिकाओं को रखा गया है।

भिलाई के व अन्य कुछ पुस्तकालयों के नाम : (1) सिविक सेंटर (2) मुख्य डाकघर, इंदिरा पैलेस (3) डी.पी.एस. स्कूल, जुनवानी (4) भिलाई महिला महाविद्यालय (5) सेंट थॉमस कॉलेज (6) श्री शंकराचार्य विद्यालय, हुडको (7) महिला समाज, भिलाई (8) बी.एस. पी. अस्पताल, सेक्टर–9 (9) दुर्ग सेन्ट्रल लायब्रेरी (10) दुर्ग न्यायलय (11) हिन्दी भवन (12) भिलाई क्लब (13) स्टील क्लब (14) डी.ए.वी. स्कूल, हुडको (15) कल्याण कॉलेज (16) दुर्ग जेल (17) सी.आई.डी. रायपुर (18) बी.टी.आई. (19) बी.एस.पी. अस्पताल से.9 (केबिन) (20) लिमाऊंट मंदिर शिकागो अमरीका (21) दिव्य जीवन संघ, छत्तीसगढ़ की 11 शाखाएँ।। बी.एस.पी. सेक्टर–9 अस्पताल के प्रत्येक वार्ड में इन पुस्तिकाओं का एक सेट भेंट स्वरूप दिया गया है। आई.सी.यू. (गहन चिकित्सा केन्द्र) के बाहर बैठे रोगियों के संबन्धियों तथा ओ.पी.डी. के बाहर बैठे रोगियों तथा ज्ञान दर्शन योगाश्रम, सेक्टर–10 में उपस्थित भक्तों को भी ये पुस्तिकाएँ नियमित रूप से मैं स्वयं बाँट रही हूँ। योग साधना एवं सांस्कृतिक केन्द्र, मैत्री नगर तथा शिवानन्द योग निकेतन, नेहरू नगर में भी ये पुस्तिकाएँ ज्ञान प्रसाद के रूप में नियमित रूप से बाँटी जा रही हैं।

''ज्ञान का वितरण सर्वोत्तम सेवा है। ज्ञान के वितरण से समस्त दुर्गुणों का निराकरण सम्भव है''–परमगुरु स्वामी शिवानन्द

''ज्ञानयज्ञ द्रव्य यज्ञ से अत्यन्त श्रेष्ठ है'' (गीता IV, 33)

''अध्यात्मिक ज्ञानदान का पुण्य दूसरे दान के पुण्य से 16 गुणा अधिक है।'' महर्षि वेदव्यास (श्री मदभागवत्)

<u>इस ज्ञानयज्ञ में सक्रिय भाग लेने का एक सुअवसर</u>

एक अपील

इस पुस्तिका में प्रकाशनार्थ विज्ञापन स्वीकृत हैं। जानकारी लिखकर प्राप्त करें। इस पुस्तिका की 1000 प्रतियाँ छपवाने में लगभग 20,000 रुपये तक का खर्च आ रहा है। दानदाताओं से प्रार्थना है कि वे अपना सहयोग दें और दान की राशि मनीआर्डर, एकाऊंट पेयी चेक अथवा ड्राफ्ट के द्वारा **''ज्ञान यज्ञ वैलफेयर सोसाइटी''** के नाम से निम्नलिखित पते पर भेजें।

प्रीति अग्रवाल क्वाटर नं.–2ए, सड़क–24, सेक्टर–9, भिलाई–490009, जिला–दुर्ग, छत्तीसगढ़, भारत

यह प्रत्येक पुस्तिका परमगुरु स्वामी शिवानन्द के चरणों में ज्ञान पुष्पमाला के रूप में अर्पित करने के लिए रिखियापीठ एवं शिवानन्द आश्रम भेजी जा रही है।

ॐ

This booklet is being written by divine inspiration of Param Guru Swami Sivananda and infinite blessings of paramhansa Swami Satyananda Saraswati. Paramhansa Swami NiranJanananda Saraswati (former paramacharya of world's first yoga university "Bihar Yoga Bharti") is guiding this writing. This is the 15th booklet of Jnana Yajna (Gyana Yagya) series of Param Guru Swami Sivananda in Steel City of Bhilai. The main aim of publishing these booklets is to disseminate spiritual knowledge for public health and public welfare. For paving the spiritual development of common man, this booklet is being distributed free of cost all over the world through various devotees by hand, post and internet regularly. These booklets are being kept by various libraries all over the world. A set of these booklets is being kept in Sivananda Ashram, Rishikesh.

A few libraries in & outside Bhilai are as follows : (1) Civic Centre (2) Main Post Office, Indira Place (3) Delhi Public School, Junwani (4) Bhilai Mahila Mahavidyalaya (5) St. Thomas College (6) Shri Shankaracharya Vidyalaya, Hudco (7) D.A.V. School, Hudco (8) Mahila Samaj, Bhilai (9) B.S.P. Hospital, Sector-9, (10) Durg Central Library (11) Durg Court (12) Hindi Bhavan (13) Bhilai Club (14) Steel Club (15) Kalyan College (16) Durg Jail, (17) C.I.D. Raipur, (18) BTI (19) BSP Hospital, Sec.-9 (Cabin) (20) Limount Temple, Chicago, USA (21) 11 branches of Divine Life Society, Chhattisgarh. A set of these booklets has been donated in each and every ward of BSP Hospital, Sector-9. I have personally distributed a lot of booklets to patients and their relatives sitting outside OPD and ICU (Intensive care unit). These booklets are also distributed regularly at Sivanand Yog Niketan, Nehru Nagar, Gyan Darshan Yogashram Sec.-10, Yog Sadhna & Sanskrit Kendra, Maitri Nagar as Gyan Prasad.

"Dissemination of spiritual knowledge ensures eradication of all evil qualities." - Param Guru Swami Sivananda.

"Gyan Yagya is much better than Dravaya Yagya - (GeetaIV, 33)

"The punya (merit) of dissemination of spiritual knowledge is 16 times greater than punya of other charities."- (Sri Mad Bhagvat, Maharishi Ved Vyas)

<u>An opportunity to take an active part in this Gyan Yagya.</u>

AN APPEAL

Advertisements are accepted for publishing in this booklet. To publish 1000 copies of one booklet approximately Rs. 20,000 is required. I request donors to contribute generously for this noble mission.

Please address all correspondence and donations by draft, money order or account payee cheque in the favour of **"Gyan Yagya Welfare Society"** and post to the following address :

PRITI AGGRAWAL, Qr. 2A, Street 24, Sector-9, Bhilai 490009, Distt.-Durg. Chhattisgarh. INDIA

Each of these booklets is being sent to Rikhia Peeth and Sivananda Ashram offered as Jnana Flower garland at the lotus feet of my Param Guru Swami Sivananda.

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

स्वामी शिवानन्द का जन्म 8 सितम्बर 1887 को तमिलनाडु में हुआ। वे एक चिकित्सक थे। लोगों के दुःखों से द्रवीभूत होकर शरीर के चिकित्सक ने सब कुछ त्याग कर आध्यात्मिक जीवन अपनाया। ज्ञान का वितरण उनका प्रिय विषय था। वे कहते, ''जब तुम भूखे को रोटी देते हो तो वह पुनः भूखा हो जाता है कुछ समय बाद। जब तुम नंगे को वस्त्र देते हो तो पुनः वस्त्र माँगता है, उस वस्त्र के फट जाने के बाद । यदि तुम किसी को ज्ञान देते हो तो उसका संस्कार बनता है और उसका जीवन बदल जाता है।'' 1936 में उन्होंने ऋषिकेश में 'दिव्य जीवन संघ की स्थापना की आज जहाँ भव्य शिवानन्द आश्रम, दातव्य चिकित्सालय, कुष्ठ आश्रम एवं योग वेदान्त फोरस्ट अकादमी एवं प्रेस हैं। उस पूरे क्षेत्र को शिवानन्द नगर कहा जाता है। उन्होंने अपने जीवन काल में दो सौ से भी अधिक पुस्तकें विभिन्न विषयों पर लिखीं। ऋषिकेश में 14 जुलाई, 1963 को उन्होंने इस नश्वर देह का त्याग किया।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

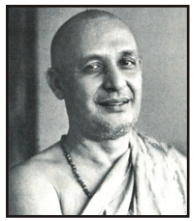

स्वामी सत्यानन्द का जन्म 1923 में उत्तरप्रदेश के अल्मोड़ा ग्राम में हुआ। सन् 1943 में, वे अपने गुरु शिवानन्द जी से मिले और 12 वर्ष तक गुरु आश्रम में रहकर उन्होंने गुरु आज्ञानुसार कठिन श्रम किया। गुरु के आदेशानुसार 1956 में वे योग का प्रचार और प्रसार सम्पूर्ण विश्व में करने के लिए निकले। सन् 1963 से 1983 तक उन्होंने सम्पूर्ण विश्व में योग का ध्वज लहराया। अनेक संस्थाओं की उन्होंने स्थापना की जनकल्याण के लिए, जिनमें मुंगेर स्थित बिहार योग विश्वविद्यालय प्रमुख है। सन् 1989 से सन् 2009 तक उन्होंने झारखण्ड स्थित रिखिया ग्राम को अपनी तपस्थली बनाया और वहाँ संन्यासी का जीवन अपना कर अनेक कठिन साधनाएँ की। मुंगेर में उन्होंने ''योग'' की ज्योति प्रज्वलित की और रिखिया में 'सेवा, प्यार और दान' का परचम लहराया। रिखिया पीठ में 5 दिसम्बर, 2009 को उन्होंने इस नश्वर देह का त्याग किया।

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

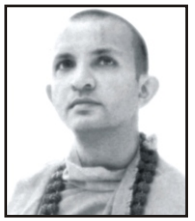

स्वामी जी का जन्म 1960 में छत्तीसगढ़ के राजनाँदगाँव में हुआ। 11 वर्ष की अल्पायु में, वे योग का विकास करने के लिए विदेश चले गए। वहाँ उन्होंने अनेक देशों की यात्रा की और अपने गुरु स्वामी सत्यानन्द के मिशन (योग का प्रचार, प्रसार) को दिशा दी। सन् 1993 में उनके गुरु ने उनको अपना उत्तराधिकारी घोषित किया और उन्हें विश्व गुरु की उपाधि दी। वे एक शांत, सौम्य और हंसमुख स्वभाव के स्वामी हैं जो बरबस ही भक्तों को अपनी ओर आकर्षित करता है। उनकी बाल सुलभ सरलता सहज ही करोड़ों को मोहित कर लेती है। उनकी पुस्तकों में योग को वैज्ञानिक ढंग से समझाया गया है जो आज के बुद्धिजीवियों के लिए उपयुक्त है।

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

स्वामी जी का जन्म 1953 में प॰ बंगाल में हुआ। उन्होंने संन्यास ग्रहण करने से पूर्व एयर इण्डिया में सेवा करते हुए पूरे विश्व का भ्रमण किया। 22 वर्ष की उम्र में, उन्हें अपने गुरु स्वामी सत्यानन्द से संन्यास ग्रहण करने की प्रेरणा मिली। उन्होंने अपने गुरु के साथ देश–विदेश की अनेक यात्राएँ की। उनका मातृवत् स्नेह और कुशल निर्देशन एक अनोखा संगम है। वे अनथक रिखिया पंचायत के पिछड़े वर्गों के उत्थान का कार्य 1989 से कर रही हैं। अपने गुरु स्वामी सत्यानन्द की ऊर्जा का वे एक सशक्त माध्यम हैं। रिखिया जाने वाले सब साधकों का वह बखूबी आध्यात्मिक मार्गदर्शन करती हैं।

ज्ञान यज्ञ वैलफेयर सोसायटी के बारे में कुछ शब्द :–

परमगुरु स्वामी शिवानन्द के दिव्य अनुग्रह से मुझे उनके वृहद् ज्ञान यज्ञ में एक बूँद बनने का सुअवसर प्राप्त हुआ। यह सोसायटी एक दातव्य संस्था है, जिसका मुख्य उद्देश्य है आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार एवं प्रसार निःशुल्क। यह संस्था पूर्णतया धर्म निरपेक्ष है और सभी सन्तों को समान आदर देने में विश्वास रखती है। परमहंस स्वामी सत्यानन्द के आशीर्वाद से इस संस्था का गठन, परमहंस स्वामी निरंजनानंद के अपरोक्ष निर्देशन से किया गया है।

आज आधुनिक युग में मानव पीड़ित है भौतिकवाद की अधिकता के कारण। इन पुस्तिकाओं में विभिन्न सन्तों की शिक्षाओं का सरलीकरण करते हुए एक प्रयास किया गया है, मानव को उसके अपने अन्दर के ईश्वरत्व से जोड़ने का। संसार में रहते हुए व्यक्ति आज भी एक दिव्य जीवन यापन कर सकता है, यही इस ज्ञान यज्ञ का अन्तिम (Ultimate) उद्देश्य है।

ये लेख सत्य अनुभवों पर आधारित हैं, अतः प्रत्येक व्यक्ति इनसे प्रेरणा लेकर एक प्रयोग कर सकता है और अपना उत्थान स्वयं कर सकता है।

सुख, शांति और प्रसन्नता तो तेरे बस में है, ए मानव कहाँ तू ढूँढ़ता है उसे संसार के विषय भोगों में ? कहाँ तू ढूँढ़ता है उसे झूठे और धोखेबाज ठगों के दरबार में ?

करनी है सेवा निष्काम थोड़ी सी। करना है दान थोड़ा सा निःस्वार्थ भाव से।

करना है प्यार थोड़ा सा अनजानों को, वृद्धों, गरीबों और जरूरतमंदों को।

यही है सार सब धर्मों का ! यही है सार सब पन्थों का !

एक अनुरोध

पाठकों से नम्र निवेदन है कि वे पढ़ने के पश्चात् इन पुस्तिकाओं को आस–पास के पुस्तकालयों में दे दें ताकि, अनेक लोग इस साहित्य को पढ़ सकें और लाभान्वित हो सकें।

प्रस्तावना

इस पुस्तिका में प्रयास किया गया है स्वामी सत्यानन्द जी की कुछ शिक्षाओं को संकलित करने का। स्वामी जी की इन शिक्षाओं को मैंने अपने जीवन में कार्यान्वित करने का प्रयास किया और उनकी कृपा का प्रत्यक्ष अनुभव अपने रोम–रोम में किया। आज विज्ञान का युग है। प्रत्येक व्यक्ति प्रमाण चाहता है विश्वास करने से पहले। मैं भी इसी विचार धारा की हूँ, यह लिखने में मुझे कोई भी झिझक अथवा शर्म नहीं है। यहाँ, यह भी लिखना अनिवार्य है कि मैंने ईमानदारी से इन शिक्षाओं को अपनाने का प्रयास किया था, कर रही हूँ। इन प्रयासों की सफलता में गुरु कृपा का वृहद सहयोग है। स्वामी जी ने अपनी कृपा का वरद हस्त मेरे मस्तक पर रखा, यह मेरा सौभाग्य है। अपने अन्दर के अनुभवों से ही मैं गुरु के विशाल व्यक्तित्व के एक कण को समझने में समर्थ हो पाई। उन्होंने मुझे चुना, यह उनकी महती कृपा है। आज मैं चाहती हूँ, जन – जन तक उनकी शिक्षाओं को पहुँचाना ताकि लोग जाने की आज कलियुग में भी निःस्वार्थता जीवित है। जीवित है ईश्वर आज भी इस धरा पर ऐसे निःस्वार्थ गुरुओं के माध्यम से। जीवित है मानवता आज भी इस धरा पर ऐसे निःस्वार्थ गुरुओं के माध्यम से। आवश्यकता है सच्चे दिल से उस परमपिता परमेश्वर को पुकारने की। जिस रोज कृपा उस परमपिता की होगी सत्कर्मों के संचय से, ऐसे गुरु आपके जीवन में आएँगे और अपनी कृपा दृष्टि से, अपनी करुणा वृष्टि से आपकी झोली भर देंगे।

न केवल आपकी झोली भर देंगे, अपितु भर कर छलका देंगे।

करिए सत्कर्म इस मानव देह से, हर किसी जीव में उस ईश्वर का रूप देखते हुए।

पाइए असीम सुख, शान्ति और प्रसन्नता इसी धरा पर, इसी जन्म में।

– प्रीति अग्रवाल

विषय सूची

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ क्र.
	प्रथम खण्ड–ज्ञान यज्ञ	
1.	क्या है आखिर यह ज्ञान यज्ञ ?	01
2.	सन्त पूजा क्यों ?	01
3.	मेरे सद्गुरु	02
4.	कैसे आए परमहंस स्वामी सत्यानन्द मेरे जीवन में ?	02
	द्वितीय खण्ड – परमहंस स्वामी सत्यानंद	
5.	कौन हैं परमहंस ?	03
6.	आध्यात्मिक जीवन	04
7.	श्री स्वामी सत्यानंद – योग अवतार	04
8.	श्री स्वामी सत्यानन्द – एक भविष्य द्रष्टा	05
9.	नचिकेता वैराग्य	06
10.	श्री स्वामी सत्यानन्द – एक विशाल वट वृक्ष	06
11.	पंचाग्नि साधना	07
12.	श्री स्वामी सत्यानन्द – एक अनोखे संत	08
13.	श्री स्वामी सत्यानन्द – एक उदात्त व्यक्तित्व	09
14.	श्री स्वामी सत्यानन्द की सरल शिक्षाएँ और मैं	10
15.	जब तुम दूसरों के बारे में सोचते हो तो ईश्वर तुम्हारे बारे में सोचता है।	11
16.	कीर्तन–सबसे ऊँची भक्ति	12
17.	मन को अपना मित्र बनाओ	12
18.	क्या चाहे यह मन ?	13
19.	यज्ञ– एक उच्च प्रकार का योग है	13
20.	सब कुछ भगवान पर छोड़ो	14
21.	बच्चों में संस्कार का महत्व	15
22.	एक सच्ची कहानी मेरे छात्र की	16
23.	वर्तमान युग में संन्यासी का कर्त्तव्य	16
24.	विश्वास आध्यात्मिक जीवन का ब्रह्मास्त्र है	17
25.	मातृशक्ति को मेरा प्रणाम	17
26.	जब ईश्वर मानव को महामानव बनाना चाहता है तो वह उसे दुःख देता है	18
27.	निष्काम सेवा एक संपूर्ण साधना है	19
28.	क्यों करती हूँ मैं सेवा आज सतत निरन्तर ?	20
29.	स्त्रियों के उद्धारक	20
30.	1500 कन्याओं और बटुकों (लड़कों) के चहेते पिता	21
31.	तुम लोग मुझे गुरु समझते हो पर मैं तो स्वयं को शिष्य ही मानता हूँ अपने गुरु श्री स्वामी शिवानन्द का	22
32.	दान व्यावहारिक रूप में	23
33.	सौंदर्य लहरी के प्रचारक	23
34.	श्री स्वामी सत्यानन्द – एक वैज्ञानिक	24
35.	तुम एक अमर आत्मा हो	25
36.	श्री स्वामी सत्यानन्द – एक शल्य चिकित्सक	25
37.	योग निद्रा के आविष्कारक	26
38.	श्री स्वामी सत्यानन्द का संकल्प	26
	तृतीय खण्ड–रिखियापीठ	
39.	रिखिया पीठ – श्री स्वामी सत्यानन्द की तपस्थली	27
40.	मेरा रिखिया पीठ का आश्रम प्रवास – एक अनुभव	28
41.	रिखिया पीठ का नवरात्रि अनुष्ठान	29
42.	रिखिया पीठ का राजसूय यज्ञ – एक अवलोकन	31
43.	रिखिया पीठ की कन्याएँ और बटुक	34
44.	रिखिया पीठ की नृत्यांगनाएँ	35
	चतुर्थ खण्ड – सत्संग श्री स्वामी सत्यानंद के संग	
45.	मनीराम एक गुण्डा	36
46.	श्री स्वामी जी आज के भगवान ?	37
47.	भगवान से क्या माँगे ?	38
48.	रामायण का महत्व	38
49.	अपनी शक्ति को पहचानो और जगाओ	39
50.	कन्या का महत्व	39
51.	विदेशी भक्त	40

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ क्र.
52.	स्व–निर्देश	41
53.	कुण्डलिनि	42
54.	यथा योग्यं तथा कुरू	43
55.	चाँद की यात्रा	43
56.	प्रभु यंत्री, मैं यंत्र	44
57.	भक्ति का भोजन	45
58.	जो तुम दूसरों को देते हो तुम्हें वापस मिलता है।	46
59.	गुरु पूर्णिमा संदेश	47
	पंचम खण्ड– मैं और मेरे गुरु	
60.	मैं और गुरु ?	48
61.	कौन हूँ मैं ? कौन हूँ मैं ?	49
62.	मैंने पाया साया एक सद्गुरु का	49
63.	मेरी एक प्रार्थना अपने गुरु के श्री चरणों में	50
64.	मेरे जीवन में आए एक सद्गुरु	51
65.	जाग उठी मेरी आत्मशक्ति गुरु कृपा से	52
66.	मेरे गुरु मेरे रक्षक	53
67.	श्री स्वामी सत्यानन्द की इच्छा मृत्यु	53
68.	हे गुरुदेव कौन हो तुम इन्सान या भगवान ?	54
69.	एक परमहंस की विदाई	55
70.	एक परमहंस का निर्वाण	56
71.	क्या सीखे हम श्री स्वामी जी के निर्वाण से ?	56
72.	क्या सीखे हम परमहंस स्वामी सत्यानन्द जी के जीवन से ?	57
73.	मेरे गुरु का असीम अनुकम्पा	58
74.	मेरे सदगुरु परमहंस स्वामी सत्यानन्द जीवित हैं आज भी !	59
75.	अपने गुरु के श्री चरणों में मेरा नमन	60
76.	परमहंस स्वामी सत्यानंद का समाधि स्थल (एक अनुभव)	61
77.	परमहंस स्वामी सत्यानंद का दर्शन चैत्र रामनवमी को	62
78.	दान दाताओं की सूची	63

प्रथम खण्ड–ज्ञान यज्ञ

क्या है आखिर यह ज्ञान यज्ञ ?

है यह ज्ञान यज्ञ, ज्ञान के वितरण का निःस्वार्थ भाव से, निष्काम भाव से।
है यह ज्ञान यज्ञ, ज्ञान के वितरण का बिना किसी भेद भाव के।
है न कोई अमीर अथवा गरीब उस परमपिता के दरबार में।
है न कोई हिन्दू अथवा मुसलमान उस परमपिता के दरबार में।
हैं हम सब सन्तान उस एक ही पिता की; कहें चाहे उसको अल्लाह, राम अथवा ईसा मसीहा।
है केवल एक ही कानून उसका और वह है 'अच्छा करो और अच्छा पाओ।'
हर धर्म यही शिक्षा देता है, गर कोई ठीक से समझ पाता है। बनाए गए हैं पंथ और जाति–पाँति के भेद–भाव कुछ मतलबी रुढ़िवादियों के द्वारा।
किया है उन्होंने भ्रमित भोले–भाले जन साधारण को और किया है सिद्ध अपना मतलब।
अब समय आ गया है कि हम जागें और इन्सानियत के धर्म को अपनाएँ।
गर्व करें अपने मानव होने पर और निभाएँ धर्म इन्सानियत का।
धर्म इन्सानियत का जो है दया का, प्यार का, मैत्री का और करुणा का।
धर्म जो है सेवा का निष्काम भाव का। सबके साथ मिल जुल कर रहने का।
धर्म जो है बाँटने का सबके साथ, जो कुछ भी है अपने पास।
यही है ज्ञान यज्ञ। यही है समय मानव को उसके अन्दर के ईश्वरत्व को जगाने का।
जागेगा मानव जिस रोज, अपने अन्दर के प्रकाश से जुड़ेगा और करेगा दर्शन उस ईश्वर का जो सब जड़ चेतन का रचयिता है।
कहाँ है भेद फल में पेड़ के ? कहाँ है भेद नीर में नदी के ? कहाँ है भेद प्रकाश में सूरज के ?
तो उठो जागो ! हम प्रकृति से जुड़ें और अपने जीवन को दूसरों के लिए समर्पित करें।
पाएँ खुशियाँ अनन्त अपने इस प्रयास में और प्राप्त करें स्नेह असीम अनजानों का।
बनाएँ अपना जीवन सार्थक इस धरा पर और छोड़ जाएँ निशान कुछ समय की रेत पर।

'तुम जो सुख पाते हो, उसकी अपेक्षा तुम जो सुख देते हो,वह तुम्हें ज्यादा सुखी बनाता है।'' – स्वामी सत्यानन्द

सन्त पूजा क्यों ?

गुण पूजा ही लोक संग्रह है। स्थूल दृष्टि से व्यक्ति का पूजन दृष्टिगोचर होता है, किन्तु सूक्ष्म दृष्टि से यह व्यक्ति पूजा नहीं चारित्र्य की पूजा है, गुण पूजा है।
गुण पूजा ही गुणों को प्राप्त करने का उपकरण है।
सन्त का पूजन सर्वेश्वर का ही पूजन है।
जलती ज्योति से ही ज्योति को जलाया जा सकता है।
सुशील सन्त जलती हुई ज्योति है।

उसी की कृपा से व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र की ज्योति जल उठती है।
दीर्घायु हो सद्गुणी सन्त और दीर्घायु हो सद्गुण–पूजक समाज ! – एक संकलन

मेरे सद्गुरु

कैसे आई मैं इस धरा पर ? क्यों आई मैं इस धरा पर ?
ऐसे अनेक प्रश्न मेरे जेहन को मथते हैं और जवाब न मिलने पर व्यथित मुझे ये करते हैं।
करना चाहती हूँ, कल्याण जन–जन का इस ईश्वर प्रदत्त देह से।
देखी जाती हूँ, शक की नजर से। करते हैं लोग शंका मेरे सद्विचारों पर।
हो जाती हूँ, अन्दर तक आहत ऐसे मिथ्या दोषारोपणों से।
झूलती थी जब मैं इस झूले में व्यथा और कथा के, तब मेरे जीवन में एक सद्गुरु आए।
पकड़ा हाथ सद्गुरु ने मेरा और दिखाई राह परमार्थ की।
किया विश्वास उन्होंने मुझ पर पर क्योंकि वे मेरे मन को पढ़ सकते हैं।
रखा हाथ मेरे सिर पर और किया मालामाल मुझे अपने आशीर्वाद से।
प्राप्त करके उनका सम्बल हुई मैं निश्चिंत और मिला प्रोत्साहन मेरे अन्दर के भाव को।
उनके सशक्त मार्गदर्शन से रखा मैंने कदम मजबूती से परमार्थ की इस राह पर।
पाकर उनका निर्देशन और आश्वासन, रख पाई मैं अपना आत्मबल संचित ; किया सामना बाधाओं का दृढ़ता से।
हुआ जीवन मेरा धन्य और किया मैंने समपर्ण उनके श्री चरणों में धीरे–धीरे।
मिल रहे हैं उत्तर मेरे अनुतरित्त प्रश्नों के और भर रहें हैं एक नूतन आत्मबल से मेरे अन्तर्मन को।
चाहती हूँ आज मैं कि हर व्यक्ति ऐसे मार्ग पर चले, एक सद्गुरु की शरण ग्रहण करे और जीवन अपना धन्य बनाए।
क्योंकि परमार्थ के इस मार्ग पर अनेक फूल सुख, शांति और प्रसन्नता के मैं चुनती हूँ।

कैसे आए परमहंस स्वामी सत्यानन्द मेरे जीवन में ?

स्वामी सत्यानन्द मेरे जीवन में आए डंके की चोट पर, एक चुनौती के रूप में।
किए प्रयोग जब मैंने उनकी शिक्षाओं पर, होने लगे वे घटित सत्य।
मैं हैरान थी ! आश्चर्यचकित थी ! करवाया उन्होंने सर्मपण मुझ से डंके की चोट पर।
जाग उठी जिज्ञासा मेरे भीतर उनको जानने की, पहचानने की, उनकी शिक्षाओं के सच होने से।
कबीर का कथन, ''तू कहता कागद की लेखी, मैं कहता अँखियन की देखी'' मेरे जीवन में शतप्रतिशत घटित होने लगा।
एक नूतन रोमांच से मैं भर उठी। अपने अनुभव भला अब कैसे ठुकराऊँ।
नहीं झुका था यह सिर इससे पहले किसी इन्सान के आगे।
झुकाया उन्होंने न केवल मेरा सिर अपितु अहम् भी अपने श्री चरणों में।

किया ध्वस्त उन्होंने मेरा अहम् अपने स्नेह की छाँव देकर मेरे अस्तित्व को।
आकर उनकी शरण में, जान सकी मैं क्षुद्रता अपने अस्तित्व की और विशालता उनके हृदय की।
किया क्षमा उन्होंने मेरी अनेक गलतियों को, मेरी नादानियों को।
किया मैंने समर्पण अपने स्व का धीरे–धीरे उनकें श्री चरणों में देख कर उनकी निस्वार्थता।
कहीं कोई छल–कपट नहीं, कोई दुराव या छिपाव नहीं।
ऐसे गुण आज कलियुग में ! अन्तर तक मैं हैरान हो उठी।
हुई मैं नतमस्तक अर्न्तमन से इस दिव्य विभूति के श्री चरणों में, जिन्होंने बनाया मेरा जीवन सार्थक इस धरा पर !
मिटा दी प्यास मेरे अधूरेपन की और एक सूरमा बना दिया मुझे, जो औरों को प्रेरणा देने के काबिल बनी।
नहीं हैं शब्द मेरे पास जो उनका धन्यवाद कर सकें।
है केवल मेरे पास मेरी श्रद्धा और विश्वास जो केवल उनकी कृपा का परिणाम है।
मैं चाहती हूँ, लोग जानें उनको और उनकी शिक्षाओं को।
और जीवन अपना सफल करें उनकी शिक्षाओं को जीवन में अपना कर।
होगा सार्थक उनका जीवन जब वे अपने निजस्वरूप से जुड़ेंगे और अपने अन्दर के प्रकाश से ही जग को प्रकाशित करेंगे।

द्वितीय खण्ड– परमहंस स्वामी सत्यानंद

कौन हैं परमहंस

परमहंस हैं वे जो उच्च चेतना में रहते हैं स्थित सर्वदा।
परमहंस हैं वे जो कर सकते हैं चेतना और पदार्थ को अलग–अलग।
परमहंस हैं वे जलती ज्योति जो अनेकों का मार्गदर्शन करने में सक्षम हैं।
परमहंस हैं वे सर्वेश्वर इस धरा पर जो हैं सन्त एक ऊँचे दर्जे के।
रामकृष्ण परमहंस के शिष्य थे स्वामी विवेकानन्द जो विश्व को अध्यात्म का मार्ग दिखा गए।
परमहंस सत्यानंद के शिष्य हैं परमहंस स्वामी निरंजनानंद जो विश्व को अध्यात्म का मार्ग दिखा रहे हैं और अनेक शिष्यों का जीवन नैसर्गिक आलोक से भर रहे हैं।
मैं नतमस्तक हूँ ऐसे गुरुओं के श्री चरणों में जो जी रहे हैं केवल बहुजन हिताय और बहुजन सुखाय के लिए।
हैं उनके गुण अनोखे। हैं उनके चरित्र अनोखे।
हैं वे प्रेरणा स्त्रोत अपनी वाणी से, अपने व्यवहार से और अपने चरित्र से।
लोग उनके श्री वचनों को पढ़े और अपना जीवन उन्नत करें, परहित की इसी भावना से प्रेरित हो कर, ये चरित्र कलमबद्ध करती हूँ, और जन–जन में निःशुल्क, बाँटती हूँ।
करती हूँ प्रार्थना परमहंस जी से कि वे सब पर अपनी कृपा करें उनको अनन्त सुख, शांति और प्रसनन्ता प्राप्त करने का मार्ग दिखाएँ।

आध्यात्मिक जीवन

(स्वामी शिवानन्द और स्वामी सत्यानन्द की शिक्षाओं से)

आज वर्तमान युग में अनेक व्यक्ति ध्यान में रुचि दिखा रहें हैं। अनेक नौसिखए व्यक्तियों ने ध्यान को एक व्यापार बना लिया है। बाजार में बिकने वाले अनेक कैसेट, सी.डी और डी.वी.डी तुरन्त ध्यान लगवाने का दावा करते हुए खूब बिक रहे हैं। स्वामी शिवानन्द एक ऐसे सन्त थे जिन्होने ध्यान को स्थायी में रुप प्राप्त करने के लिए विभिन्न चरण बताए जो कि अत्यधिक सरल हैं। उनके शिष्य स्वामी सत्यानन्द ने भी अपने गुरु की उन्हीं शिक्षाओं का पालन किया और योग के संदेश को विश्व के एक कोने से दूसरे कोने में प्रचारित किया। मैंने एक प्रयास किया है इन चरणों का सरलीकरण करने का जन साधारण के लिए :–

1. नर्सरी कक्षा– सेवा, सेवा और सेवा। सेवा यदि निःस्वार्थ होगी तो परिणाम शीघ्र प्राप्त होगा।
2. प्राथमिक स्कूल–(i) पहली कक्षा – प्यार देना अपने परिवार के अतिरिक्त दूसरों को। उनकी समस्याओं को समझना और जो बन सके मदद करना।
   (ii) दूसरी कक्षा–देना, देना और देना। जो कुछ भी ईश्वर ने तुमको दिया है उसको दूसरों के साथ बाँटना।
   (iii) तीसरी कक्षा–शुद्धि हृदय की करना – सत्य, अंहिसा ईमानदारी संतोष, ईश्वर प्रणिधान इत्यादि का सतत पालन करते हुए।
   जिस प्रकार साबुन में भिगो कर हम कपड़े साफ करते हैं उसी प्रकार उपरोक्त कक्षाओं को पास करने का प्रयत्न करना, अपने हृदय की मैल साफ करने के लिए।
3. कॉलेज शिक्षा–ध्यान की उपलब्धि कॉलेज में हो सकती है। ध्यान का प्रयत्न किया जाता है नियमित रूप से ईश्वर को याद करते हुए मंत्र जप, कीर्तन, पूजा पाठ आदि के द्वारा। जिस प्रकार एक बच्चा छोटी कक्षाएँ पास किए बिना कॉलेज में प्रवेश नहीं कर सकता, उसी प्रकार ऊपर लिखित कक्षाओं को ईमानदारी से पास किए बिना ध्यान की उपलब्धि संभव नहीं है।
4. आत्मसाक्षात्कार तो यूनिवर्सिटी की पोस्ट ग्रेजुयेट कक्षा है। आध्यात्मिक जीवन की शुरुआत होती है सेवा से और अन्त होता है आत्मसाक्षात्कार में। जिस प्रकार स्कूल की शिक्षा के लिए शिक्षक आवश्यक है, उसी प्रकार आध्यात्मिक जीवन के लिए ब्रह्मज्ञानी सद्गुरु आवश्यक है।

श्री स्वामी सत्यानंद – योग अवतार

स्वामी जी को यदि आज के युग में योग अवतार कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। आज से कुछ वर्ष पहले योग को केवल साधुओं और संन्यासियों के लिए ही माना जाता था। योग के कुछ कठिन आसन ही जन साधारण को ज्ञात थे। लोग मानते थे कि योगी ही उन आसनों को करने में सक्षम हो सकते थे। अतः भारत की प्राचीन योग संस्कृति लुप्तप्रायः हो गई थी।

ऐसे समय में सन 1963 से 1983 तक स्वामी जी ने पूरे विश्व में योग का शंखनाद

किया। योग का सरलीकरण होने से, जन–साधारण ने इसे अपने जीवन में सुख, शांति और अच्छे स्वास्थ्य के लिए अपनाया। विश्व के प्रत्येक देश में वैज्ञानिक परीक्षणों के आधार पर योग की सत्ता का आधिपत्य स्वामी जी के द्वारा जमाया गया। योग जीवन जीने की कला सिखाता है। यह एक विज्ञान है जो पूर्णतया धर्म निरपेक्ष है, अतः ईसाई और मुस्लिम देशों में भी स्वामी जी ने कई प्रशिक्षण केन्द्र खोले जो आज भी सफलता पूर्वक चल रहे हैं। योग के संदेश को विश्व के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक पहुँचाने में सत्यानन्द योग पद्धति का वृहद् भूमिका (Role) है। उनके शिष्य स्वामी निरंजन ने भी इस योग प्रचार, प्रसार को आगे बढ़ाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 11 वर्ष की अल्पायु से उन्होंने विदेशी लोगों को मंत्रों का अभ्यास ध्वनि तरंगों के वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुरूप करवाया। अध्यात्म के इस नूतन रूप से बुद्धिजीवी बहुत अधिक प्रभावित हुए। यही सत्यानन्द योग पद्धति की विशेषता भी है कि वह प्रत्येक व्यक्ति को उसकी क्षमता के अनुकूल योगाभ्यास करवाने में विश्वास रखती है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमताओं और कमजोरियों को पहचाने और उनका विकास अथवा निराकरण करते हुए, अपने व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास करे, यही योग की परिणति है, यह मैंने अपने अनुभवों से समझा।

"जीवन को बेहतर तरीके से जीने के लिए और शांति प्राप्त करने के लिए योग एक अनुशासन है। यदि तुम शांति प्राप्त करना चाहते हो और अपनी आध्यात्मिक प्रगति (Evolve) चाहते हो तो योग को अपने जीवन का एक अंग बनाओ।" – स्वामी सत्यानन्द

श्री स्वामी सत्यानन्द – एक भविष्य द्रष्टा

मेरे गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद जीवित हैं अपने निर्वाण के पश्चात् भी असीम प्राण के रूप में।

मेरे गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद जीवित हैं अपने निर्वाण के पश्चात् भी असीम ऊर्जा के रूप में।

मेरे गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद जीवित हैं अपने निर्वाण के पश्चात् भी असीम और अनन्त प्रकाश के रूप में।

जो भी भक्त उनको सच्चे मन से पुकारता है, वही उनकी कृपा का प्रसाद पाता है।

हो वह प्रसाद चाहे सांसारिक अथवा आध्यात्मिक, कोई भी याचक उनके द्वार से खाली नहीं जाता है।

यही है महिमा एक सद्गुरु की, एक सच्चे संत की, किया समर्पित उन्होंने अपना जीवन लोक कल्याण के लिए।

विरले हैं ऐसे संत जो अपने अवगुणों का ब्यौरा इतने विस्तार से देते हैं। विरले हैं ऐसे संत जो हम भक्तों को अवगुणों के बावजूद भी अपनाते हैं।

वे एक ऐसे भविष्य द्रष्टा हैं जो योग को एक नये रूप में रुपान्तरित कर गए। हम साधकों के लिए योग निद्रा और अन्तर्मौन जैसे सरल ध्यानों का प्रावधान कर गए।

थी उनके हृदय में जगह हर शरणार्थी के लिए हो चाहे वह साधु अथवा कुटिल।

कभी–कभी सोचती हूँ, मनन चिन्तन करती हूँ , कि मैं इतनी देर (सन् 1998) से क्यों उनके श्री चरणों से जुड़ी ?

फिर देती हूँ सांत्वना स्वयं को, 'देर आयद, दुरुस्त आयद' की कहावत मुझ पर चरितार्थ होती है।
करती हूँ दृढ़ अपने विश्वास और श्रद्धा को और उनके निर्वाण के पश्चात् भी उनकी असीम ऊर्जा और कृपा की अधिकारिणी बनती हूँ।
अपने अनुभवों से और भी अधिक उनके चरणों में नतमस्तक होती हूँ।

नचिकेता वैराग्य

शास्त्रों में ऐसा वर्णन आता है कि नचिकेता एक बालक था जिसने आत्मज्ञान को प्राप्त करने के लिए यमराज द्वारा दिखाए गए समस्त प्रलोभनों को ठुकरा दिया था। परमगुरु स्वामी शिवानन्द ने परमहंस स्वामी सत्यानंद के विषय में कहा था, ''यह मेरा शिष्य नचिकेता वैराग्य से सम्पन्न है यह अकेला 4 व्यक्तियों के बराबर काम करता है। आन्तरिक वैराग्य होने के बावजूद प्रत्येक कार्य को कुशलता से सम्पन्न करता है।'' स्वामी सत्यानंद अपने गुरु के ऋषिकेश आश्रम में विभिन्न प्रकार के कार्य बिना थके करते थे लगातार ! अपने कक्ष में उनको अधिक सामान पसंद नहीं था। एक बार स्वामी शिवानन्द उनके कक्ष में आए और कहा, ''अरे तुम्हारा कमरा तो एकदम खाली है। कुछ कम्बल, गद्दे इत्यादि रखो, किसी को आवश्यकता पड़ने पर देते जाना।'' ऐसा कहकर उन्होंने बहुत सारा सामान उनके कक्ष में भिजवा दिया। न चाहते हुए भी स्वामी जी ने उस सामान को अपने कक्ष में रखा और जिस किसी को भी आवश्यकता होती, वह उनसे आ कर ले जाता। अपने गुरु के आश्रम से वे केवल 108 रुपये लेकर निकले जो अन्त समय तक उनके पास थे। मुंगेर का आश्रम स्थापित करने के पश्चात् वे कौपीन और कमण्डल लेकर, सब कुछ पीछे छोड़ कर, कभी न वापिस आने के लिए निकल पड़े। इतना दृढ़ वैराग्य, आज के युग में ! आज कलियुग में अनेक धोखेबाज पैसे के लिए लोगों को लूटते हुए पकड़े जाते हैं। ऐसे गुरु क्या इस धरा पर ईश्वर का प्रतिनिधित्व नहीं कर रहे हैं ?

श्री स्वामी सत्यानन्द – एक विशाल वट वृक्ष

सन् 1943 में जब स्वामी सत्यानन्द ने अपने गुरु श्री स्वामी शिवानन्द का ऋषिकेश आश्रम छोड़ा तो उनके गुरु ने कहा था,''तुम एक विशाल वृक्ष बनोगे। एक बड़ा पेड, दूसरे बड़े पेड़ के साये में फल फूल नहीं सकता।'' आज उनके गुरु का कथन अक्षरक्षः सत्य साबित हो रहा है। अपने परिव्राजक जीवन में स्वामी सत्यानन्द ने अनेक कठिनाइयों का सामना किया है। कई बार उनको भिक्षा माँगनी पड़ी। कई बार गालियाँ भी खानी पड़ी,''अरे इतने हट्टे–कट्टे हो कर भिक्षा माँगते हो।'' लोग योग कक्षा के लिए बुला लेते थे, परन्तु रेल का किराया नहीं भेजते थे। स्टेशन पर लेने के लिए नहीं आते थे। अपने गुरु की आज्ञा 'योग का संदेश घर–घर तक फैलाओ' कैसे पूरी करें ? तब थक कर निराश हो कर अपने इष्ट देव मृत्युंजय भगवान (त्रयम्बकेश्वर नासिक) की शरण में गए। उन्होंने प्रार्थना की,''हे देव मुझ पर कृपा करो, मैं 20 वर्ष तक यह कार्य करुँगा, उसके बाद इसे छोड़ दूँगा।'' देव कृपा से उन्होंने न केवल भारत में अपितु सम्पूर्ण विश्व में योग का ध्वज लहराया इन 20 वर्षों में और मुंगेर (बिहार) में एक बहुत बड़े आश्रम की स्थापना की। मुंगेर में आज

विश्व का प्रथम योग विश्वविद्यालय ''बिहार योग भारती'' है जहाँ विद्यार्थी दूर–दूर से योग की शिक्षा ग्रहण करने आते हैं। अन्य कई संस्थाएँ भी उनके शिष्य परमहंस स्वामी निरजंन ने वहाँ स्थापित की हैं। सन् 1989 में अपने इष्टदेव नासिक से 'चितौ भूमि' में जाने की दैवी प्ररेणा प्राप्त हुई। तब उन्होंने झारखण्ड स्थित बैजनाथ धाम से 10 कि.मी. दूर रिखिया को अपनी तपस्थली बनाया। वहाँ पर अनके कठिन साधनाएँ जैसे पंचाग्नि साधना, (जिसमें चारों तरफ आग लकड़ी के द्वारा और पाँचवी आग सूर्य की गर्मी होती है) इत्यादि की। ईश्वरीय प्रेरणा प्राप्त होने पर उन्होंने स्वामी निरजंन को उसे पूरा करने के लिए कहा। यह ईश्वरीय आदेश था,''तुम अपने पड़ोसियों को भी वह सब कुछ सुख सुविधाएँ दो, जो तुम्हें दी गई हैं।'' इन 20 वर्षों में रिखिया के आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों का वृहद विकास स्वामी सत्यानन्द के संकल्प का ही परिणाम है। वहाँ के लगभग 1500 बालक (बटुक) और कन्याओं की शिक्षा का दायित्व भी आश्रमवासियों ने संभाला स्वामी जी के निर्देशानुसार। सन् 1995 से सन् 2007 तक 12 वर्षीय राजसूय यज्ञ उन्होंने किया और उस यज्ञ में प्रत्येक आगन्तुक को देवी माँ का प्रसाद भरपूर दिया गया प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों। स्वंय को उन्होने लोगों के दिलों का सम्राट कहा जिन्हें उन्होंने प्यार के अस्त्र से जीता था। सन् 2009 में ठीक 20 वर्ष के बाद उन्होने 5 दिसम्बर को रात बारह बजे स्वेच्छा से महासमाधि ग्रहण की। उस विशाल वृक्ष की छाया में आज भी अनेक क्लान्त पथिकों को विश्राम मिल रहा है। वे आज पहले से अधिक शक्तिशाली हो कर वहाँ विराजमान हैं और अपने शिष्यों का मार्ग दर्शन कर रहे हैं।

पंचाग्नि साधना

पंचाग्नि साधना का अर्थ है पाँच अग्नियों के बीच बैठना। चारों तरफ लकड़ी की आग और सिर पर सूर्य का ताप। स्वामी सत्यानन्द ने अपने कर्मों का क्षय करने के लिए ईश्वरीय आदेशानुसार पंचाग्नि साधना की; 16 जनवरी से 16 जुलाई तक (मकर संक्रान्ति से कर्क संक्रान्ति तक) लगातार पाँच वर्ष। यह एक कठिन साधना है जिसमें कई व्यक्तियों के प्राण भी चले जाते हैं। उस समय वह सारे शरीर पर राख मल कर अवधूत अवस्था में चारों अग्नियों के बीच में बैठते थे। इस साधना में संयम का बहुत महत्व है अन्यथा निर्जलन हो जाता है। नारियल पानी अथवा दही का पतला मठ्ठा ही व्यक्ति को निर्जलन (Dehydration) से बचा सकता है। इस साधना के समय उन्होंने रिखिया में एकान्त वास लिया। उनके कुत्ते भोलेनाथ (जो एक अलसेशियन कुत्ता था) ने उनकी मदद की इस साधना को पूर्ण करने के लिए। कितना आश्चर्य है कि एक अलसेशियन कुत्ता और अग्नि ! स्वामी जी ने कहा, ''भोलेनाथ पहले जन्मों में मेरा शिष्य था। क्योंकि वह गुरु सेवा करना चाहता था, अतः उसने श्वान योनी स्वीकार की स्वेच्छा से।'' स्वामी निरंजन ने लिखा है,''एक बार मैं श्री स्वामी जी से 100 मीटर की दूरी पर धूप में बैठ गया, जब वे पंचाग्नि साधना कर रहे थे। तीन दिन तक भंयकर सिरदर्द से पीड़ित रहा। स्वामी जी तो सिद्ध पुरुष बन गए हैं।'' स्वामी सत्यानन्द ने सन् 2006 के शतचण्डी यज्ञ में कहा,'' पंचाग्नि साधना करने के बाद मैं हीट प्रूफ (Heat proof) बन गया। अब मुझे बिलकुल गर्मी नहीं लगती, गर्मियों में भी। यद्यपि कुछ वर्ष पहले मैं वातानूकल

(A.C.) के बिना रह नहीं सकता था।" इतनी दृढ़ इच्छा शक्ति ! और इतना बेबाक वर्णन अपनी कमजोरियों का ! क्या यही एक सच्चे संत की पहचान नहीं है ? उनकी इसी सरलता ने, बेबाकियत से मुझे उनके श्री चरणों से बाँध दिया। लोग जानें कि सच्चा संत कैसा होता है और उनकी शिक्षाएँ अपने जीवन में अपनाएँ ; ऐसा मैं चाहती हूँ। इसी परहित की भावना से प्रेरित हो कर यह लेख कलमबद्ध करती हूँ, और जन–जन में निःशुल्क बाँटती हूँ।

श्री स्वामी सत्यानन्द – एक अनोखे संत

स्वामी जी की शिक्षाएँ यद्यपि आज से कई वर्ष पुरानी हैं, तथापि वे आधुनिक युग के परिपेक्ष में बिल्कुल सही (fit) बैठती हैं। उन्होंने अपने अनुभवों से ही शिक्षाओं को मानने का आवाहन किया। आज का व्यक्ति हर चीज को सरलता से मानने को तैयार नहीं होता। उसे तो प्रमाण चाहिए। और यह कठिन भी है क्योंकि धोखे धड़ी और छल कपट के साये में पल रहे बच्चों की भी बुद्धि टी.वी. पर सनसनी खेज खबरें सुन – सुन कर, देख कर दूषित हो चुकी है। ऐसे में विश्वास का नितान्त अभाव है। सन् 1963 से 1983 तक स्वामी जी ने योग का प्रचार और प्रसार किया संपूर्ण विश्व में वैज्ञानिक परीक्षणों के आधार पर। आज योग हर व्यक्ति अपना रहा है अपनी शारीरिक मानसिक और अन्य समस्याओं से उबरने के लिए। पूरे विश्व में योग गुरुओं की मानों बाढ़ सी ही आ गई है। अपनी कमजोरियों को स्वीकार करना अत्यधिक कठिन है। सर्व प्रथम तो अपनी कमजोरियों को जानना, फिर उनको जनसाधारण के समक्ष स्वीकार करना, यह एक बहुत साहस का कार्य है। स्वामी जी ने बार – बार अपने प्रवचनों में अपनी कमजोरियों का वर्णन किया है। उदाहरण स्वरूप उन्होंने कहा, ''जब मैं अपने गुरु के ऋषिकेश आश्रम में रहता था, तो मेरे गुरु स्वामी शिवानन्द ने मुझे कोढ़ियों की देखभाल करने के लिए भेजा। एक कोढ़ी तो मुझे गाली भी देता था, मैंने उसकी सेवा करने के लिए मना कर दिया । मुझे अन्दर से कोई दया का भाव नहीं आता था। जब मेरे गुरु जी को पता चला तो उन्होंने मुझे बुलाया और कहा,''यह कार्य तुम अपनी अन्दर की सफाई के लिए कर रहे हो।'' मुझे कुष्ट आश्रम में रामायण पढ़ने के लिए भेजा जाता था। मुझे अन्दर से कोई भाव अथवा करुणा नहीं आती थी उन पर। मैं केवल गुरु आज्ञा मान कर वह काम करता था। जब मैं रिखिया आया और मैंने दूसरों के बारे में सोचना शुरु किया तो भगवान ने मेरे बारे में सोचना शुरु किया। तब यह ईश्वर प्रदत्त सेवा मेरा जनून बन गई क्योंकि इसमें मुझे वह मिला जो मुझे अनेक वर्षों की कठिन साधनाओं और तपस्या से भी नहीं मिला था। यदि तुम अपनी आध्यात्मिक कार को तेज गति से दौड़ाना चाहते हो तो आत्म भाव (दूसरों को अपनी तरह समझ कर) से गरीबों वृद्धों और जरुरतमंदों की सेवा करो। आज के युग की यही आवश्यकता है। सेवा में निष्काम भाव लाने से वह एक ऐसे साबुन का कार्य करती है जो कर्मों की मैल धो डालती है। कर्मों की मैल धुलने से अन्दर की प्रसन्नता, सुख और शांति बहुतायत में मिलती है यह मैंने अपने सच्चे अनुभव से समझा। इसी प्रक्रिया को स्वामी जी ने कर्म योग कहा और उनकी तपस्थली रिखियापीठ (झारखण्ड) में कर्मयोग की साधना पर ही जोर दिया जाता है। विभिन्न कार्यक्रमों में पूजा पाठ के साथ–साथ सेवा पर ही

जोर दिया जाता है। अपने चरित्र का खुला वर्णन उन्होंने जनकल्याण के लिए किया ताकि साधारण व्यक्ति अपनी कमजोरियों से हतोत्साहित न हो। जो जहाँ जिस परिस्थिति में है वहीं रह कर कुछ न कुछ सेवा अवश्य कर सकता है। और अपने जीवन का उद्धार कर सकता है। आज व्यक्ति केवल और केवल अपने परिवार के विषय में सोचता है। ''जब तुम दूसरों के बारे में सोचते हो तो तुम ईश्वर के बारे में सोचते हो।''– स्वामी सत्यानन्द। आधुनिक मानव को ईश्वर के जीवंत रूप की पूजा कठिन अवश्य लगेगी आरम्भ में, परन्तु इस रूप में की गई सेवा अत्यधिक सुखदायक है, जब व्यक्ति स्वयं सामने वाले के चहरे पर मुस्कान की किरण देखता है। श्री मद् भागवत् में भगवान ने ईश्वर की इस रूप में की गई सेवा को अधिक श्रेष्ठ बताया है प्रतिमा की पूजा से। स्वामी जी ने कहा,''जब तुम दान देते हो तो यही सोचो कि तुम अपनी खुशी के लिए दान दे रहे हो।'' जब उनकी इस शिक्षा को जीवन में अपनाया तो मुझे बहुत अच्छा लगा। सच ही तो है यह निम्न मन जो वर्षों से स्वार्थ के पीछे भाग रहा है, परमार्थ जल्दी से करने नहीं देता। हम लोग किसी गरीब व्यक्ति को अपनी दी हुई चीज का दुरुपयोग करते हुए अगर देखते है तो व्यथित हो जाते हैं और उसको पुनः न देने का संकल्प कर लेते हैं। स्वामी जी ने कहा,''ईश्वर तुम को इतनी चीजें देता है, तुम उनको दुरुपयोग नहीं करते क्या ?'' उनका यह वाक्य पढ़कर अन्दर से आवाज आती है, मैं कौन हूँ ? क्या यह सम्पत्ति मेरी है ? कहीं न कहीं अन्तर में संग्रह वृत्ति पर भी यह चोट करती है और मुझे अपरिग्रह की ओर धकेलती है। देने के बाद जब अपनी आध्यात्मिक प्रगति को देखती हूँ तो स्वामी जी की इस शिक्षा को भाव के साथ अपनाने का सफल प्रयास करती हूँ। सोचती हूँ यदि वे अपनी कमजोरियों पर विजय प्राप्त कर सके, तो मैं क्यों नहीं कर सकती। इस विचार से मुझे बहुत शक्ति मिलती है अन्दर से।

श्री स्वामी सत्यानन्द – एक उदात्त व्यक्तित्व

परमहंस स्वामी सत्यानन्द का चरित्र एक अद्वितीय चरित्र था। गुरु बनने के बावजूद उन्होंने स्वयं को सदैव एक शिष्य ही माना। अनेक वर्षों तक योग का ध्वज सम्पूर्ण विश्व में लहराने के पश्चात् उन्होंने मुंगेर आश्रम को एकदम त्याग दिया और ईश्वर प्रेरणा से झारखण्ड स्थित रिखिया के ग्रामीण क्षेत्र को अपनी तपस्थली बनाया। कई वर्षों तक वहाँ एकान्त में पंचाग्नि साधना की अपनी शुद्धि के लिए। ईश्वर प्रेरणा से उन्होंने रिखिया क्षेत्र के ग्रामीणों के उद्धार का बीड़ा उठाया और अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के 'सेवा, प्यार और दान' के सूत्र को मुख्य साधना बनाया। स्वामी सत्यानन्द 1989 में रिखिया क्षेत्र में गए। और आज 20 वर्ष पश्चात् वहाँ का विकास स्वतः प्रत्यक्ष प्रमाण है एक निःस्वार्थ सेवा का। ऋषिकेश निवासी एक ब्रह्मचारी ने स्वामी सत्यानन्द की एक कथा सुनाई जो मैं यहाँ लिखना चाहती हूँ। उन्होंने कहा, ''एक बार स्वामी सत्यानन्द ऋषिकेश स्थित अपने गुरु के आश्रम आए। हम लोग सब शिष्य उनके चारों तरफ बैठ गए चींटियों की तरह पूछने लगे,''गुरुदेव (शिवानन्द) के बारे में बताइए न।'' तब स्वामी सत्यानन्द ने कहा,''तुम लोगों का कर्त्तव्य है कि गुरुदेव (स्वामी शिवानन्द) के विषय में लोगों को बताओ। अन्यथा कुछ वर्षों बाद लोग मिर्च मसाला लगा कर गुरुजी के विषय में बाते करेंगे। कहेंगे उनको

भी 'ईसा मसीह' की तरह सूली पर टाँगा गया था।'' जब मैंने यह सुना तो मेरे अन्दर के नेत्र खुल गए। गुरु की असीम अनुकम्पा से मुझे उनके ज्ञान यज्ञ एक बूँद बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह तो मुझे अच्छा लगता था कि लोगों को गुरु जी की सरल शिक्षाओं के प्रभाव के बारे में बताऊँ ताकि वे अपने दुःखों से निस्तार पा सकें। परन्तु इस ज्ञान यज्ञ का गहन अर्थ क्या है, मैं समझ नहीं सकी थी। कुछ दिन पहले मेरी एक पुस्तिका पढ़ कर ''शिवानन्द आश्रम'' जाने के लिए एक महिला प्रेरित हुई। उसने सारा गाइडेन्स (Guidance) मुझसे ही लिया। मुझे उसे बताते हुए गर्व हुआ कि आज कलियुग में भी रिखिया पीठ (देवघर, झारखण्ड) और शिवानन्द आश्रम (ऋषिकेश) जैसे आश्रम हैं जहाँ निःस्वार्थ भाव है। आज भी उस मिट्टी में ईश्वर तत्व की महक है। अनेक धोखेबाज ठगों ने जहाँ धर्म को एक व्यापार बनाया है, वहाँ ऐसे ब्रह्मज्ञानी जीवनमुक्त भी हैं, जो आज भी सूक्ष्म रूप से इन आश्रमों में बसते हैं' और अपने अनेक शिष्यों का अपरोक्ष मार्गदर्शन करते हैं। नहीं है भेदभाव उनकी दृष्टि में जाति अथवा धर्म का। नहीं है भेदभाव उनकी दृष्टि में अमीरी अथवा गरीबी का। देखते हैं वे भगवान ही सृष्टि की हर रचना में, हो चाहे वह जड़ अथवा चेतन। करती हूँ नमन मैं अन्तर्मन से ऐसे संतो के श्री चरणों में। होती हूँ नतमस्तक अन्तर्मन से अपने सच्चे अनुभवों से। करती हूँ आह्वान जन–जन का, अपने गुरु की शिक्षाओं का पालन करने का, उन पर एक प्रयोग करने का। अपने अनुभवों से ही अपने जीवन के उद्धार करने का। यही है ज्ञान यज्ञ। यही है पूजा मेरी आज। हर मानव जागे और अपने निज स्वरूप से जुड़े और स्वयं का उत्थान करे। निकले बाहर चिंता, परेशानी और रोग के दुष्चक्र से। और इसी धरा पर स्वर्ग का सुख प्राप्त करे। फिर कहाँ का दुःख ? कहाँ का विषाद ?

स्वामी सत्यानन्द की सरल शिक्षाएँ और मैं

बाँध लिया स्वामी जी ने मुझे अपनी सरलता से, अपनी सरल शिक्षाओं में।
देखा मैंने सत्य का रूप उनमें, उनकी शिक्षाओं में।
अपनाया जब मैंने उनकी शिक्षाओं को अपने जीवन में सरलता से पूर्ण विश्वास से।
होने लगी वे घटित सत्य मेरे जीवन में और भर दिया उन्होंने मेरे अन्तर्मन को एक गहरे विश्वास से।
माना जब मैंने उनकी अधिष्ठात्री देवी तुलसी को अपना रोग हटाने का साधन और की प्रार्थना प्रतिदिन माँ तुलसी के बिरवे से।
दिया उपहार माँ तुलसी ने मुझे आरोग्य का धीरे–धीरे।
स्वामी जी ने पुकारा माँ लक्ष्मी को लोक कल्याण के लिए सम्पदा प्रदान करने के लिए।
मैंने भी किया आह्वान माँ लक्ष्मी का अपने ज्ञान यज्ञ के लिए जो मैं गुरुकृपा से परहित के लिए 3 वर्ष से कर रही हूँ।
भर दिया प्याला माँ लक्ष्मी ने मेरा और भेजा अनजाने मददगारों को इस परहित के कार्य हेतु।
मैं नतमस्तक हूँ, अपने गुरु के श्री चरणों में जिन्होंने मुझे इतनी सरल शिक्षाएँ प्रदान की और दिया उपहार असीम श्रद्धा और धैर्य का जिसके कारण मैं बाधाएँ आने के

बावजूद भी डिगी नहीं अपने परमार्थ के पथ से।
किया प्रदान सम्बल स्वामी निरंजन ने जब अपनी कृपा का तो हुई मैं मालामाल।
भर दिया प्याला मेरा उन्होंने अपनी कृपा से।
नहीं, नहीं केवल भरा नहीं, अपितु भर कर छलका दिया।
दिया मुझे इतना कि मैं सम्भाल नहीं पा रही।
वे तो हैं राजा, हैं स्वामी अक्षयपात्र के।
वे लगातार कृपा की दौलत को लुटाते ही जा रहे हैं।
मैं अभिभूत हूँ! मैं स्तम्भित हूँ ! यह सब इतना सरल !

"जब तुम दूसरों के बारे में सोचते हो तो ईश्वर तुम्हारे बारे में सोचता है।"

यह कथन दिखने में, पढ़ने में अत्यधिक सरल है, परन्तु व्यवहार में कठिन है। आज कितने लोग ऐसे है जो अपने परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त दूसरों के दुःख–सुख से अन्दर से जुड़ पाते हैं ? सामाजिक शिष्टाचार के नाते हम लोग दूसरों का हाल–चाल पूछने अस्पताल अथवा उनके घर जाते जरुर हैं, परन्तु बाहर निकलते ही अपनी समस्याओं में उलझ कर उनको भूल जाते हैं। आज – कल फोन की बहुतायत होने से लोग फोन पर ही हाल–चाल पूछ कर अपने कर्त्तव्य की इति श्री कर देते हैं। दूसरों के बारे में सोचने का अर्थ हैं उनके लिए कुछ सार्थक करने का दृढ़ संकल्प लेना और फिर उसको कार्यान्वित करना। जब हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं दूसरों के लिए कुछ करने की तो ईश्वरीय कृपा से वह संकल्प अवश्यमेव फलित होता है। जब मैं जानलेवा गठिया के रोग से राहत पा सकी अनेक उपायों के द्वारा, तो मेरी दिली इच्छा थी कि मैं अपने अनुभवों को दूसरों के साथ बाँटू ताकि वे लोग भी अपनी इच्छा शक्ति जाग्रत कर सकें। मैंने अनेक लोगों से मदद माँगी अस्पताल जाने के लिए, मरीजों को योग निद्रा करवाने के लिए। परन्तु मेरा कोई भी प्रयास सफल नहीं हुआ। अन्तर्मन में परमार्थ की कामना लिए मैं छोटे–छोटे सेवा के कार्य करती रही और उनमें निष्काम भाव लाने का प्रयास करती रही। गुरु की असीम अनुकम्पा से अक्टूबर सन् 2006 में मैंने अपना पहला लेख ''हीलिंग पावर ऑफ फेथ'' अंग्रेजी में लिखा जो बहुत पसंद किया गया। गुरु कृपा ने मेरी दबी हुई कामना को एक निश्चित दिशा दिखाई। जितना अधिक मैं दूसरों के विषय में सोच कर इन लेखों को बाँटती गई, उतनी अधिक कृपा मुझे मिलती गई। स्वामी जी के कथन की सत्यता का अहसास मुझे अपने अनुभवों से स्पष्ट होने लगा। फरवरी सन् 2010 तक मेरी 14 छोटी पुस्तिकाएँ निःशुल्क वितरणार्थ छप कर, बँट चुकी हैं। यह पन्द्रहवीं पुस्तिका है। विभिन्न विषयों पर लिखी गई इन पुस्तिकाओं में, मेरे सत्य अनुभव हैं, मेरी आध्यात्मिक प्रगति के। जैसे–जैसे मैं यह सेवा करती जा रही हूँ, मेरी आन्तरिक प्रसन्नता बढ़ती जा रही है। जीवन में उतार–चढ़ाव के बावजूद, समस्याओं के बावजूद, मैं उनसे एक हद तक अप्रभावित रह पाती हूँ। यद्यपि मैं समझती हूँ कि यह बहुत छोटी सी उपलब्धि है इस मार्ग की, फिर भी मैं बहुत संतुष्ट हूँ अपने जीवन से; क्योंकि गुरु की असीम कृपा से मैं दिन – रात ओत – प्रोत रहती

हूँ। चिन्ता और तनाव तो मानो कहीं दूर ही छूट गए हैं। यदि आप भी अपने जीवन में एक सकारात्मक परिर्वतन लाना चाहते हैं तो स्वामी जी की इस सरल शिक्षा का मनन चिन्तन करिए। और केवल मनन चिन्तन पर न छोड़िए अपितु उसे व्यवहार में लाइए। परोपकार ही आज के युग में सबसे उत्तम साधना है जिससे ईश्वर कृपा, गुरु कृपा का मिलना सुनिश्चित है।

"कीर्तन–सबसे ऊँची भक्ति"

''अगली शताब्दी भक्ति की होगी।'' स्वामी जी ने भक्ति को सब दुःखों से मुक्ति पाने का एक सशक्त साधन बताया है। आखिर आज कलियुग में दुःख, परेशानियाँ और चिंताएँ क्यों बढ़ गई हैं ? इसका मुख्य कारण है कि मनुष्य की भावना अपने ऊपर पूर्णतया केन्द्रित हो गई है। आदमी आज कवेल अपने और अपने परिवार के विषय में सोचता है। ऐसे में उसकी समस्त भावनाएँ और ऊर्जा संसार की ओर ही बहती हैं। यदि व्यक्ति की भावनाओं को ईश्वर (जिसमें भी उसका विश्वास हो) की ओर मोड़ा जाता है तो एक हद तक वह अपने दुःख,परेशानियों और चिंताओं से मुक्ति पा सकता है।

कलियुग में मन सदैव चंचल रहता है और व्यक्ति द्वन्द्व में ही (Confused) रहता है। क्या करुँ ? क्या न करुँ आदि आदि। प्रभु नाम के गायन को कीर्तन कहा जाता है। मन को बाँधने के लिए, साधने के लिए, कीर्तन एक सशक्त उपाय है। दैवी संगीत के माध्यम से मन को अत्यधिक विश्राम और ऊर्जा मिलती है। संकीर्तन को यदि साधना के रूप में अपनाया जाए तो आत्मा और परमात्मा का मिलन सहज ही संभव है। नाम संकीर्तन में व्यक्ति भाव विभोर हो जाता है, उसका रोम –रोम खिल उठता है और उसका हृदय नाच उठता है। ऐसे में नृत्य का बाह्य प्रकटीकरण एक स्वाभाविक (Natural) अभिव्यक्ति है। अनेक संतों ने कीर्तन को भगवद् प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन बताया है। स्वामी जी की तपस्थली रिखिया पीठ में कीर्तन को अत्यधिक महत्व दिया गया है। शतचण्डी यज्ञ में लगातार तीन घण्टे कीर्तन वहाँ की कन्याओं के द्वारा किया जाता है। इस कीर्तन में एक दिव्य समाँ बाँध जाता है वातावरण में। ''कीर्तन से भाव समाधि संभव है।'' – स्वामी शिवानन्द

''मन को अपना मित्र बनाओ''

मन एक ऐसा विषय है जो हर व्यक्ति को उलझन में डाल कर रखता है। कभी सुख का हर्षातिरेक तो कभी दुःख का दावाग्नल। सारा जीवन व्यक्ति का इसी मन के इशारों पर नाचते हुए बीत जाता है। आधुनिक युग में अनेक व्यक्ति इस मन को प्रशिक्षित करने की कला को सीखना चाहते हैं अपने जीवन में एक सकारात्मक परिर्वतन लाने के लिए। स्वामी जी ने लिखा है,''अपने मन के साथ लड़ाई झगड़ा मत करो। कुछ मन की सुनो, कुछ अपनी मन को सुनाओ। मन को धीरे–धीरे अपना मित्र बनाओ। मेरे मन ने तो अब मुझे कह दिया है, मैं आप का शिष्य हूँ, आप मेरे गुरु हैं।''

मैंने स्वामी जी की इस शिक्षा को जीवन में अपनाया तो धीरे–धीरे इस मन की प्रकृति को समझी। मन की गतिविधियों के प्रति सजग होने से व्यक्ति एक हद तक इस मन

को समझ पाता है। यद्यपि यह बहुत धैर्य की साधना है, फिर भी परिणाम मिलते हैं। आखिर कहीं न कहीं तो हमें शुरुआत करनी है अपने जीवन में स्थाई शान्ति और प्रसन्नता प्राप्त करने की।

स्वामी जी ने लिखा है,''मन को अच्छा लगता है सेवा करना, दूसरों की मदद करना। मन को अच्छा लगता है दूसरों की समस्याओं के बारे में जानना और उनकी मदद करना। यदि तुम अपने मन को साधना चाहते हो तो उसे किसी ऐसे कार्य में व्यस्त रखो जो दूसरों का भला करने के लिए हो और मन को पसन्द भी हो।''

मन को परमार्थ में लगाने से अपना ही स्वार्थ सिद्ध होता है, जिस रोज व्यक्ति इस गहन सत्य को समझ जाता है,उसके जीवन में प्रभु कृपा का अवतरण स्वतः हो जाता है। असीम सुख, शान्ति और प्रसन्नता ईश्वर कृपा का एक रूप ही तो है।

क्या चाहे यह मन ?

दुःख से मुक्ति। चिन्ता से मुक्ति। रोग से मुक्ति। गरीबी से मुक्ति।।
धन की प्राप्ति। समृद्धि की प्राप्ति। सुख की प्राप्ति।।
सुख कैसा सुख ! अल्प कलीन या दीर्घकालीन ?
अपना या पराया। कितना ? क्यों ? कैसे ? यह है त्रासदी आज की।।
मन तो खुश है परोपकार में। हम करते नहीं। मन तो खुश है प्रभु नाम में। हम लेते नहीं।।
मन तो खुश है सेवा में। हम करते नहीं। मन तो खुश है दया में। हम करते नहीं।।
मन तो खुश है करुणा में। हम करते नहीं।।
मन तो खुश है चुगली में। हम ऐसा सोचते हैं। मन तो खुश है परनिन्दा में। हम ऐसा सोचते हैं।।
मन तो खुश है पर चर्चा में। हम ऐसा सोचते हैं। मन तो खुश है ईर्ष्या में। हम ऐसा सोचते हैं।।
मन तो खुश है मनोरंजन में। हम ऐसा सोचते हैं। मन तो खुश है दूरदर्शन में। हम ऐसा सोचते हैं।।
समय के विकल्प हम ढूँढ़ते हैं रात दिन। सो कर आलस्य का साथ निभाते हैं रात दिन।
मोटर गाड़ी में घूमते हैं। सुख की तलाश में रात दिन।।
अरे मानव ! अरे तू जाग ! अपने को पहचान ! अस्तित्व है तेरा निर्मल। भविष्य है तेरा उज्ज्वल।।
जिस सुख की तुझे तलाश है। वह तेरे पास है।।
चारों ओर है प्रभु की कृपा। तेरा जीवन जा रहा है वृथा।।
अब तो तू कर ले कुछ सेवा। निष्काम, निःस्वार्थ।।
अपनी शक्ति को पहचान। ईश्वर का तू अंश इसको जान।।
जिस दिन होगा तुझे यह ज्ञान। तेरी समस्याओं का होगा निदान।।

"यज्ञ – एक उच्च प्रकार का योग है"

यज्ञ मानव के उच्च चेतना के विस्तार का द्योतक है। यज्ञ बाहरी और आंतरिक,

दोनो रूप से कार्य करता है। वातावरण की शुद्धि और प्रकृति का सामंजस्य बिठाए रखने के लिए यज्ञ एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यज्ञ में विशेष रोगों के उपचार की आश्चर्यजनक क्षमता है। विशेष सामग्रियों का जब यज्ञ में उपयोग किया जाता है तो उनका धुँआ शरीर के अर्न्ततम तक अवशोषित होकर एक रसायन का कार्य करता है। विभिन्न परीक्षणों से यह सिद्ध किया जा चुका है कि यज्ञ से रुमाइटाइड आर्थराइटिस (गठिया वात), कैंसर जैसे असाध्य रोगों का भी उपचार संभव है। यह मेरा सत्य अनुभव है। आंतरिक रूप से यज्ञ मानसिक प्रदूषण (जो कि आज नकारात्मक चिंतन, विषाद, दुःख और परेशानियों के रूप में सर्वत्र उपस्थित है) को दूर करने का सशक्त माध्यम है। पैसे की अंधी दौड़ ने आज युवकों को भी अनेक मानसिक रोगों की चपेट में ले लिया है। मनोचिकित्सकों की दवाइयाँ खास लाभकारी नहीं हैं। सामूहिक यज्ञ भारतीय संस्कृति में आदिकाल से प्रचलित हैं। सन् 1995 से सन् 2007 तक एक ऐसा ही सामूहिक राजसूय यज्ञ स्वामी सत्यानन्द ने अपनी तपस्थली रिखियापीठ में किया जिसमें देवी माँ की आराधना के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को लाभ मिला। जनकल्याण के लिए किए गए इस यज्ञ में उपस्थित भक्तों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनो ही उपहार प्राप्त हुए। इस यज्ञ में लगातार पाँच दिनों तक प्रसाद का वितरण राजाओं की तरह किया गया , श्री स्वामी जी के द्वारा। आज स्वार्थ के युग में ऐसा निःस्वार्थ भाव कहाँ देखने को मिलता है ? क्या रिखियापीठ ईश्वर का निवास स्थान नहीं है? यह प्रश्न बार – बार हर उपस्थित भक्त के मन में गूँजता है।

''यज्ञ का धुँआ एक ऐसा मिसाईल है जो प्रेम और सृजन का संदेश देता है, विनाश का नहीं। यज्ञ से गूंगा बोल सकता है,अन्धा देख सकता है, बहरा सुन सकता है। यज्ञ से ईश्वर का साक्षात्कार संभव है।'' – स्वामी सत्यानन्द

''सब कुछ भगवान पर छोड़ो''

यह वाक्य अनेक सन्तों ने दोहराया है, और हमसें अधिकांश व्यक्ति इस बात को जानते भी हैं, मानते भी हैं। परन्तु अक्सर मैं स्वयं से यह सवाल पूछती हूँ, ''क्या मैं सचमुच सब कुछ भगवान पर छोड़ पाती हूँ ?'' यही वाक्य है मनन और चिन्तन का। स्वामी जी ने यह वाक्य न केवल बोला, अपितु अपने जीवन में अपनाया। सन् 1956 में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के आदेशानुसार योग का वैज्ञानिक पक्ष विश्व में प्रचारित करने के लिए उन्होंने ऋषिकेश आश्रम छोड़ दिया। 7 वर्षों तक वे परिव्राजक संन्यासी ही तरह एक स्थान से दूसरे स्थान घूमते रहे और भिक्षा माँग कर जीवन निर्वाह करते रहे।

सन् 1963 में वे नासिक त्रयम्बकेश्वर अपने इष्ट देव भगवान मृत्युंजय के चरणों में पूर्णतया हतोत्साहित हो कर गिर पड़े। उन्होंने कहा,''मैं अपने गुरु का आदेश पालन करने में असमर्थ हूँ। आप मुझ पर कृपा करिए और मेरी मदद करिए। मैं वायदा करता हूँ कि ठीक 20 वर्ष के बाद यह काम छोड़ दूँगा।'' स्वामी जी ने लिखा है,''सन् 1964 से मेरा कार्य द्रुतगति से आरम्भ हो गया और मैं' चक्र की भाँति लिखने लगा, पढ़ने लगा, विश्व के एक कोने से दूसरे कोने तक योग का प्रचार करने लगा। मैं जानता हूँ कि ईश्वर ही यह सब कर रहे थे। 20 वर्षों में मेरा मिशन पूर्ण हुआ। मेरा

स्वप्न मुंगेर के प्रथम योग विश्वविद्यालय के रूप में विश्व के सामने साकार हुआ। विश्व के सारे देशों ने, यहाँ तक कि मुस्लिम देशों ने भी योग की सत्ता को स्वीकार किया, मैं अपने इष्टदेव से किया हुआ वायदा भूल गया।

जब सन् 1983 में नासिक गया तो मुझे अपने वायदे का स्मरण हुआ। तब सन् 1988 में मैंने एक कौपीन, धोती और कमण्डल लेकर मुंगेर के आश्रम का कभी न लौटने के लिए त्याग किया।'' जब मैंने यह पढ़ा तो आश्चर्यचकित हो उठी ! हम तो एक जगह से दूसरी जगह (धन और सामान के साथ) जाने पर भी व्यथित हो जाते हैं, ऐसा उदात्त चरित्र ! ''एक वर्ष तक मैंने सब तीर्थों का भ्रमण किया और 1989 में पुनः नासिक अपने इष्ट देव की शरण में गया और कहा, हे प्रभु अब मेरा मार्गदर्शन आप करिए।'' सन् 1989 में 8 सितम्बर को मुझे ''चित्ता भूमौ'' स्पष्ट सुनाई दिया और टी. वी की स्क्रीन की भाँति रिखिया का स्थान दिखाई दिया। इक्कीस हजार छः सौ भी सुनाई दिया, जिसका अर्थ था, हर श्वास पर जप करो। तब अपनी शिष्या स्वामी सत्संगी को मैंने रिखिया भेजा। एक सप्ताह के भीतर ही बिहार जैसे राज्य में सत्संगी ने यह जमीन खरीद ली। और ईश्वरीय आदेश के अनुसार मैंने यहाँ 108,00,000 लाख जप का अनुष्ठान किया और अपने संचित कर्मों का क्षय करने के लिए पंचाग्नि साधना की। ईश्वरीय आदेश, (''तुम अपने पड़ोसियों को वही सुख सुविधाएँ प्रदान करो, जो मैंने तुम्हें प्रदान की हैं'') के अनुसार यहाँ के ग्रामीण क्षेत्रों में दान देना शुरु किया। ईश्वर ने स्वयं सब साधन भी जुटाए, अपनी इस आज्ञा को पूरी करवाने के लिए।

उनकी कथनी और करनी में जरा सा भी अन्तर नहीं है। उनकी तपस्थली रिखिया में आज 'सेवा प्यार और दान' का ही संदेश सर्वत्र परिलक्षित है। सन् 2009, दिसम्बर में रिखिया आने के ठीक 20 वर्षों बाद उन्होंने स्वेच्छा से महासमाधि ग्रहण की। मैं नतमस्तक हूँ ऐसे सद्गुरु के श्री चरणों में।

बच्चों में संस्कार का महत्व

स्वामी सत्यानन्द ने बच्चों में संस्कार का अत्यधिक महत्व बताया है। गर्भधारण से सात माह तक माँ ही बच्चे की सर्वप्रथम गुरु होती है। जब बच्चा गर्भ में होता है तो वह अत्यधिक संवेदनशील होता है। यदि माता उस समय सत्संग अथवा कीर्तन में भाग लेती है तो बच्चा उसको अतिशीघ्र ग्रहण करता है। उदाहरणतया प्रहलाद का पिता राक्षस हिरण्यकश्यप था, इसके बावजूद वह एक उच्च कोटि का विष्णु भक्त बना। देवर्षि नारद ने उसकी माँ कयादु को नारायण मंत्र का उपदेश दिया था, जब वह गर्भवती थी।

आपको अपने बच्चों को सन्त बनाना है अथवा डाकू , एक हद तक आप निर्णय कर सकते हैं। बच्चे के मन की कच्ची मिट्टी में सात वर्ष की अवस्था तक जो संस्कार डाल दिया जाता है वह बहुत गहरा प्रभाव डालता है। स्वामी जी की पुस्तकों में वर्णन आता है कि कैसे उन्होंने परमहंस स्वामी निरंजन की माता जी को उनकी गर्भावस्था में, रामायण, गीता, महाभारत आदि पढ़ने के निर्देश दिए।

यदि बच्चों को अधिक टोका टाकी (Nagging) न की जाए और उनको अपनी गलतियों से सीखने का अवसर दिया जाए तो वे न केवल पढ़ाई में अपितु जीवन में

भी सफलता प्राप्त करते हैं। बच्चों को स्वाभाविक तरीकों से अपना व्यक्तित्व सँवारने का अवसर देना चाहिए।

एक सच्ची कहानी मेरे छात्र की

यह कहानी है एक ऐसे बालक की, जो भारत का भावी नागरिक होगा। मुझे गर्व हैं कि आज भी भारत में ऐसे बच्चे हैं और ऐसे पालक हैं। है यह धरोहर भारतीय संस्कृति की जो नई पौध में विराजमान है और न केवल विराजमान है अपितु फल फूल रही है। आज से तीन वर्ष पहले जब यह छात्र मेरे पास गणित पढ़ने आया तो मुझे स्वप्न में भी आशा नहीं थी कि वह मुझे बहुत कुछ सिखाकर जाएगा। क्योंकि मैं आध्यात्मिक साहित्य लिख रही थी अतः हर छात्र को मैं अपने लेख टाईप करने के लिए कहती थी। सन् 2006 और सन् 2007 में अनेक छात्रों ने मेरे लेख टाईप कर के दिए पर उनको उसके विषय में अधिक रुचि न थी। परन्तु यह बच्चा! इसको ये लेख बहुत अच्छे लगते थे और मुझसे बहुत सवाल करता भगवान के बारे में, गुरु जी के बारे में। इतनी छोटी उम्र में इतनी जिज्ञासा ! मैं स्वयं हैरान हो जाती उसकी रुचि देख कर। उसके पिता ने मेरे कई लेख टाईप करवा कर दिए जिनको फोटो स्टेट करवा कर मैंने व मेरी अन्य सखियों ने (जिनको इस साहित्य में रुचि है) खूब बाँटा।
सन् 2008 जनवरी में मेरी पहली पुस्तक 'सत्संग' छपी। लगातार एक के बाद एक पुस्तिका की 1000, 1500 अवथा 2000 प्रतियाँ छपवाने में बहुत पैसा खर्च होने लगा। तब मैंने भिक्षा माँगनी प्रारम्भ की। इस छात्र के पालक ने भी मेरी मदद की, अन्य लोगों की भाँति। परन्तु जब इस छात्र को 1600 रुपये छात्रवृत्ति मिली तो उसमें से 200 रुपये इसने मुझे दान राशि के रूप में मेरी 14वीं पुस्तिका 'क्या पाया मैंने अध्यात्म से' के लिए दिए। मैं अन्दर तक गुरु कृपा के लिए नतमस्तक हुई। क्या लिखूँ ? शब्द उस भावना को कलमबद्ध करने में असमर्थ हैं। मेरे अन्तर्मन से स्वतः ही उस छात्र के लिए आशीर्वाद निकला। उसके ऐसे भाव ने मुझे नूतन आशा की किरण दिखाई भविष्य के उज्ज्वल होने की। कोई स्वार्थ नहीं। कोई अपेक्षा नहीं। मैंने दोनो हाथ जोड़ कर गुरु देव से प्रार्थना की, ''हे गुरुदेव, ऐसे ही अपनी कृपा इस छात्र पर बनाए रखिएगा।''
मुझे पूरी आशा है कि भारत की नई पौध अवश्य ही आध्यात्मिक रूप से समर्थ होगी और पूरे विश्व में भारत का ध्वज सर्वोपरि लहराएगी। फैलाएगी यह संदेश विश्वबंधुत्व का, विश्वशांति का और विश्वप्रेम का। मिटाएगी यह दंश मिसाईलों का और परमाणु हथियारों का। बोएगी बीज प्रेम का, करुणा का, सहृदयता का।
आज पालकों से मेरा अनुरोध है कि वे बच्चों की आध्यात्मिक प्रगति के प्रति सजग बनें और उनका भविष्य उज्ज्वल बनाएँ। ऐसे बच्चों पर न केवल उनको, भारत को, अपितु सम्पूर्ण विश्व को गर्व होगा। होगा प्रशस्त मार्ग विश्व के राम राज्य बनने का जहाँ प्रत्येक मानव एक दूजे को प्रेम करेगा। फिर रहेगा कहाँ विषाद और दुःख ?

वर्तमान युग में संन्यासी का कर्त्तव्य

प्राचीनकाल में संन्यासी का कर्त्तव्य था आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार और प्रसार; पूजा पाठ के द्वारा यज्ञों और विभिन्न अनुष्ठानों के द्वारा। परन्तु आज कलियुग में परिस्थिति बहुत बदल चुकी है। स्वामी सत्यानंद ने ऐसा मानते हुए अपनी तपस्थली

रिखिया में पिछड़े वर्गों के लोगों के उत्थान का कार्य संभाला, ईश्वरीय आदेश मिलने के पश्चात्। उन्होंने कहा, ''मेरे गुरु स्वामी शिवानन्द जी ने एक बार कहा था, आज संन्यासी खुद अच्छा भोजन करता है और अपनी आध्यात्मिक प्रगति के लिए साधना करता है, जबकि हजारों लोग भूखे मर रहे हैं।'' उनसे मैंने पूछा था, ''फिर क्या किया जाए ?'' उन्होंने कहा था,''मैंने जो कहना था कह दिया। ''उस समय उनके शब्दों का अर्थ मैं समझ नहीं पाया था। परन्तु आज मैं रिखिया के आस – पास के 30,000 परिवारों को अन्न और वस्त्र देवी प्रसाद के रूप में दे रहा हूँ, तो मुझे उनकी बात का गहन अर्थ समझा आ रहा है। आज गरीबों को रिक्शा, ठेला, साईकिल आदि भी देना संन्यासी के कार्यक्षेत्र में आ गया है।'' जब मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा तो मैं स्वामी जी के सद्गुरु होने का पूर्ण विश्वास कर पाई। उनकी कथनी और करनी में कोई भी अन्तर नहीं है। उन्होंने बार–बार कहा,''तुम लोग जो भेंट स्वरूप देते हो, हम वही देवी माँ को अर्पण कर देते हैं। यह सब कार्य तुम्हारे सहयोग से ही हो रहा है।''
प्रत्येक गृहस्थ को वहाँ सम्मान दिया जाता है और उसे भी माँ का प्रसाद दिया जाता है भेंट के रूप में जिसे रिखियापीठ में अक्षत कहा जाता है। अक्षत का अर्थ है समूचा, अखंडित।

"विश्वास आध्यात्मिक जीवन का बह्मास्त्र है"

ब्रह्मास्त्र एक ऐसा अस्त्र है जो अवश्यमेव (Sureshot) काम करता है युद्ध में। महाभारत के युद्ध में कई बार इसका वर्णन आया है। युद्ध में प्रयोग किया गया ब्रह्मास्त्र विनाशकारी हो सकता है; परन्तु आध्यात्मिक जीवन में यदि विश्वास के ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया जाता है तो प्रगति द्रुत गति से होती है। यह बिन्दु भी विचारणीय है कि अनेक व्यक्ति चाहते हुए भी विश्वास नहीं कर पाते, गुरु पर, भगवान पर। स्वामी जी ने लिखा है, "विश्वास भी व्यक्ति के संस्कारों का प्रतिफल होता है यदि व्यक्ति अपनी माता पर पूर्ण विश्वास करता है तो उसमें गुरु अथवा भगवान पर भी विश्वास करने की क्षमता होती है।" मुझे तो ऐसा लगता है विश्वास गुरु कृपा अथवा ईश्वर कृपा का एक रूप ही है। जब गुरु चाहते हैं साधक का विश्वास बढ़ाना तो उसको वे अपनी छिपी हुई आध्यात्मिक शक्तियों की झलक दिखाते हैं। अपने अन्दर के अनुभवों को कोई भी नकार नहीं सकता। उदाहरणतया रामकृष्ण परमहंस ने स्वामी विवेकानन्द को अपने शिष्यत्व में आने के लिए बाध्य किया अपनी आध्यात्मिक शक्तियों के प्रदर्शन के द्वारा। शिष्य की सरलता और निष्कपटता गुरु को मोहित कर लेती है और वह उस शिष्य पर अपनी कृपा बहा देता है, ऐसा मैं मानती हूँ। यदि व्यक्ति सच्चाई और ईमानदारी की सम्पत्ति का मालिक है तो विश्वास स्वतः गुरु लुटा देते हैं उसको अपना शिष्य बनाने के लिए। आखिर गुरु को भी तो एक योग्य शिष्य की तलाश रहती है।

मातृशक्ति को मेरा प्रणाम

स्वामी सत्यानंद ने कहा,''आज मैं जो भी हूँ, अपनी माता के कारण हूँ। मेरी माता ने जो मुझे संस्कार दिए, उन्हीं की वजह से मैं यहाँ तक पहुँचा हूँ। मेरी माता ने मुझे

समर्थन दिया जब मैंने ईश्वर की खोज में घर त्याग करने का निर्णय लिया। एक स्त्री राम और कृष्ण पैदा करती है, अतः उसका सम्मान किया जाना चाहिए। स्त्री को अच्छी शिक्षा देनी चाहिए ताकि वह किसी पर निर्भर न हो। यहाँ गाँव में लोग शराब पीकर घर आते है और स्त्रियों को मारते हैं। यह बहुत शर्मनाक बात है। स्त्री सुरक्षा चाहती है, वह उसे मिलनी ही चाहिए। स्त्री लक्ष्मी के रूप में पति के घर में बहुत सा सामान वस्त्र, जेवर और अन्य वस्तुओं के रूप में लेकर आती है और उस स्त्री का पुरुष अपमान करता है, यह बहुत बुरी बात है। स्त्री पुरुष से किसी बात में कम नहीं है, पुरुषों ने उसको शोषण करने के लिए उसको हीन ठहराया है।''

अपनी तपस्थली रिखिया में स्वामी जी ने शतचण्डी यज्ञ का आखिरी दिन 'सीता कल्याणम्' के नाम से रखा है। उस दिन आज से कई वर्षों पहले राम और सीता का विवाह हुआ था। रिखिया के आस–पास की सब कन्याओं को स्वामी जी अपनी बेटी अथवा बहन की तरह मानते हुए उनके विवाह में शादी में दिया जाने वाला सब श्रृंगार का सामान, साड़ियाँ और सोने का जेवर, स्वयं उपहार स्वरूप देते हैं। गाँव के सरपंच से विवाह योग्य कन्याओं की सूची लेकर यह प्रबंध विभिन्न भक्तों के सहयोग से किया जाता है किसी वर्ष 100, किसी वर्ष 200 और एक वर्ष तो यह संख्या 600 तक पहुँच गई थी। हर वर्ष ये कन्याएँ एक–एक सूटकेस लेकर अपने मायके से जाती हैं। मुझे यह सुनकर, पढ़कर, देखकर बहुत अच्छा लगा। सच ही तो है जहाँ सच्चाई, निःस्वार्थ भाव है वहाँ माता लक्ष्मी स्वयं विराजती हैं और भक्त के सब सद्संकल्प पूर्ण करती हैं।

"जब ईश्वर मानव को महामानव बनाना चाहता है तो वह उसे दुःख देता है"

"आग में तप कर ही सोना पहनने लायक बनता है।" स्वामी सत्यानंद सरस्वती एक ऐसे संत थे जिन्होंने करोड़ों लोगों के मन को छूआ और उनमें बदलाव का कारण बने। बाह्य दृष्टि से व्यक्ति हर पल बदलता है बचपन से जवानी, और फिर प्रौढ़ावस्था और फिर बुढ़ापा। परन्तु अन्दर से व्यक्ति स्थायी रूप से तभी बदलता है जब उसके जीवन में कोई बड़ा भारी दुख आता है। अपने उस दुख से त्रस्त हो कर मानव परमहंस जी जैसे सन्त के चरणों में पहुँचता है तो उसे जीवन के एक नये आयाम का दर्शन होता है। यदि वह थोड़ा सा विश्वास रख कर उस संत की जीवनशैली को देखता है और उनसे कुछ सीखने का प्रयास करता है तो अपने अन्दर के अनुभवों से स्वयं हैरान हो जाता है। अन्दर के अनुभव उसे प्रेरित करते हैं अध्यात्म की ओर, एक ऐसी दुनिया की ओर जिससे वह बिल्कुल अनजान था। जब वह एक सद्गुरु की शरण में जाता है और उनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं देखता तो उसका ध्यान स्वयं पर से हट कर दूसरों पर (जो उससे कम भाग्यशाली हैं) केन्द्रित होने लगता है। तब धीरे–धीरे वह अपने ईश्वरत्व से जुड़ने की कला को सीखता है। वह जान जाता है कि सुख, शांति और प्रसन्नता तो उसके

अन्दर ही है। यह जानने के पश्चात् वह उस दुख को धन्यवाद देता है जो उसे सद्गुरु की शरण में ले कर आया। यही है प्रसाद उस परमपिता का। दुःख और फिर बहुत सारा सुख।

"निष्काम सेवा एक संपूर्ण साधना है"

"यह ईश्वर प्राप्ति का सबसे सुगम और सुनिश्चित साधन है।" निष्काम सेवा का शाब्दिक अर्थ है बिना किसी बदले की आशा के की गई सेवा। आज कलियुग में स्वार्थ का ही बोल बाला है। कोई तन का स्वार्थ चाहता है तो कोई धन का। ऐसे में अगर कोई व्यक्ति निःस्वार्थ सेवा करना भी चाहता है और करता है तो लोग सरलता से उस पर विश्वास नहीं करते हैं। ऐसे व्यक्ति के मार्ग में अनेक बाधाएँ स्वार्थी, ईर्ष्यालु व्यक्ति खड़ी करते हैं। या यूँ कहा जाए कि ईश्वर ही उन व्यक्तियों के रूप में आकर ऐसे व्यक्ति की परीक्षा लेते हैं। परन्तु यह भी सुनिश्चित है कि यदि भाव अन्दर से अच्छा है तो ईश्वर स्वयं बाधाएँ दूर करते हैं। केवल आवश्यकता है ऐसे समय में धैर्य, साहस और दृढ़ विश्वास की।

यदि व्यक्ति को एक सद्गुरु मिल जाए तो वह उसकी डूबती हुई नैया को सँभालने में अतिशय मदद करता है। यह बिन्दु भी विचारणीय है कि सद्गुरु आसानी से तो नहीं मिलता। धोखे, छल, कपट के इस युग में इन्सान किस पर विश्वास करे और किस पर न करे। अपने अनुभव से यह बात मैं दावे के साथ कह सकती हूँ कि सही समय आने पर सद्गुरु स्वयं ही शिष्य का हाथ पकड़ लेते हैं आ कर।

यह शिक्षा देखने में सरल सही पर अपनाने में अत्यधिक कठिन है। बार–बार व्यक्ति माया के जाल में उलझ जाता है। निम्न मन कोई न कोई स्वार्थ मनमोहक, आर्कषक रूप में प्रस्तुत कर देता है। प्रशंसा मिलने पर व्यक्ति अभिमान के चुँगल में फँस जाता है और स्वयं को कर्त्ता समझने लगता है। निन्दा मिलने ने पर व्यक्ति द्वेष और वितृष्णा से भर जाता है जिसको निकालना आसान नहीं है। परन्तु कभी–कभी मुझे लगता है कि इसी प्रकार प्रभु साधक को उसके अन्दर की कमजोरियाँ दिखाते हैं जो अन्यथा छिपी ही रह जाती हैं उसकी अपनी नजरों से। निष्काम सेवा के इस पथ पर चलते–चलते, मैं समझ सकती हूँ, स्वामी जी के कथन के महत्व को। यह पथ कठिन सही परन्तु मिलती हैं अनन्त खुशियाँ राह में साधक को। व्यक्ति जहाँ है, जिस परस्थिति में है निष्काम सेवा कर सकता है अपने से कम भाग्यशाली लोगों की। आवश्यकता है केवल भाव की, सेवा के अवसर ढूँढने की। मिलना है गर आपको अपने प्रभु से तो अपनाइए निष्काम सेवा जीवन में। मिलना है अगर आपको अपने निज स्वरूप से तो अपनाइए निष्काम सेवा जीवन में। करिए दर्शन प्रभु के स्वरूप के, अपने अन्तर में जो प्रत्येक जड़ चेतना में विराजता है। हो जाते हैं दर्शन जब प्रभु के इस रूप में, तो हर कोई अपना सा लगता है। चाहे हो वह वृद्ध अथवा रोगी उसकी सेवा करने को दिल चाहता है। तो आओ, सेवा के अवसर ढूँढो और ईश्वर की पूजा करो। उसकी रचनाओं की सेवा करते हुए। यही है एक सद्गुरु का संदेश जो उन्होंने जन कल्याण के लिए दिया है। है विश्वास तो आगे बढ़ो और अपना जीवन सँवारो। अपने अनुभव से मेरे कथन की सत्यता को परखो।

क्यों करती हूँ मैं सेवा आज सतत निरन्तर ?

यह प्रश्न अनेक बार मेरे जेहन में गूँजता है और मुझे मनन, चिन्तन करने के लिए प्रेरित करता है।

प्राप्त करती हूँ सुख, शांति और प्रसन्नता सेवा के इस दिव्य यज्ञ में, अपने अनुभवों से अब मैं स्पष्टतया समझ पाती हूँ। मिलता नहीं ऐसा आत्मसुख संसार के जीवन के, किसी अन्य विषय भोग में।

उसी दिव्य सुख की एक बूँद पाने के लिए अब मैं सदैव लालायित रहती हूँ।

जान चुकी हूँ गुरु कृपा से कि वह सुख तो मेरे अन्दर ही कहीं छिपा है।

जान चुकी हूँ गुरु कृपा से कि वह सुख एक आवरण से ढका है।

वह आवरण है मेरे अज्ञान का। वह आवरण है मेरे काम का, क्रोध का, लोभ का और आसक्ति का।

सन्त कहते हैं उसे मैल, षडरिपु जो हर मानव को उसके अन्तः स्वरूप से दूर कर देते हैं।

जिस रोज़ जाग जाता है भाग्य उसका, मिल जाते हैं उसे एक सद्गुरु और आत्मज्ञान की दौलत उस पर लुटाते हैं।

जान जाता है वह अपनी सबसे मूल्यवान निधि को और सेवा के द्वारा स्वयं को शुद्ध करता है।

सेवा करते – करते जब निष्काम भाव जाग्रत होता है तो वह प्रभु का दिव्य अनुग्रह प्राप्त करता है। हो जाता है जीवन उसका धन्य और दिन–रात उस आत्मसुख में ही रहना चाहता है।

यह सब इतना सरल ! इतना सुलभ ! हो जाता है वह आश्चर्यचकित अपने अनुभवों से। करता है एकत्र आत्मबल अपना और सतत सेवा ही करना चाहता है।

स्त्रियों के उद्धारक

स्वामी जी सदैव स्वयं को स्त्रियों का उद्धारक कहा करते थे। वे कहते, ''मेरा जन्म नारी जाति के उत्थान के लिए ही हुआ है।'' अपनी पुस्तकों में उन्होंने लिखा है, ''स्त्रियाँ पुरुषों से अधिक मेहनती होती हैं और ईमानदारी से कार्य करती हैं। वे लगन से प्रत्येक कार्य को करती हैं। आज प्रत्येक स्त्री को अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए ताकि कोई पुरुष उसका शोषण न कर सके।'' जब किसी ने उनसे पूछा, ''आज स्त्रियों के लिए सबसे आवश्यक क्या है ?'' स्वामी जी ने कहा, ''आज स्त्रियों के लिए सबसे अधिक आवश्यक है शिक्षा। चरित्र और नैतिकता इत्यादि सब ठीक है परन्तु वे पुरानी मान्यताएँ हैं। शिक्षा आधुनिक युग की आवश्यकता है। जो लोग स्त्री पर हाथ उठाते हैं, वे पशुवृत्ति का ही तो प्रदर्शन करते हैं।''

रिखिया पीठ की एक कन्या ने जब दूसरी कन्या से कहा,–''यदि तुम्हारा पति तुम्हे मारेगा, तो तुम क्या करोगी ?''दूसरी कन्या ने कहा, ''उसकी ऐसी हिम्मत कैसे होगी ? मैं ऐसा होने ही नहीं दूँगी।'' स्वामी जी के संरक्षण में पली बढ़ी ये कन्याएँ आत्मविश्वास की दौलत से लबालब भरी हुई हैं अपने गुणों के कारण। रिखिया पीठाधीश्वरी स्वामी सत्संगी के सान्निध्य ने इन कन्याओं को एक पुष्प की तरह

खिलने में अतिशय मदद की है। और यदि सच लिखूँ तो मेरे आत्मविश्वास ने भी एक नई उड़ान भरी, रिखिया में 25 दिन रहने के बाद। स्वामी सत्संगी ने अपने स्नेहपूर्ण मार्गदर्शन से मेरे जीवन की दिशा बदलने में एक अहम् भूमिका निभाई। उनके साथ रहने के पश्चात् मैंने जाना कि मोह और आसक्ति रहित प्रेम क्या होता है। उनके व्यवहार से मैंने सीखा कि सच्चा प्रेम लाड़–प्यार और डाँट, दोनों का सम्मिश्रण होता है; इसीलिए ऐसा प्रेम व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास करने में सक्षम होता है। प्यार करो अन्दर से, हृदय से, दिखावे के लिए नहीं। प्यार करो सच्चे मन से, बाहरी आडम्बरों को छोड़ कर। प्यार जो व्यक्ति को अन्दर तक छू जाए और कर दे द्रवित उसके पाषाण हृदय को।

ऐसा प्यार ही है सार्थक जो दूसरे व्यक्ति के जीवन की दिशा बदल देता है। बनता है वह व्यक्ति एक संपूर्ण मानव और अनेकों का जीवन उज्ज्वल बनाता है। छोड़ जाता है निशान अपने कर्मों के इस धरा पर और अनेकों का मार्गदर्शक बनता है। है हर स्त्री में उसकी भावना का बल जो उसे शीघ्र ही ईश्वर का प्यारा बनाता है। इसी भावना के बल पर स्त्री एक सफल नेत्री बन सकती है अगर मोह और आसक्ति के बंधनों को तोड़ पाती है। यही है उपहार एक परमहंस का दिव्य हर स्त्री के लिए गर है उसमें बुद्धि तो वह ग्रहण कर सकती है।

श्री स्वामी सत्यानंद–1500 कन्याओं और बटुकों (लड़कों) के चहेते पिता

परमहंस स्वामी सत्यानंद की तपस्थली रिखियापीठ के आस–पास के ग्रामीण क्षेत्रों के लगभग 1500 लड़के और लड़कियाँ उनको अपना पिता मानते हैं। और माने भी क्यों न ? आश्रम एक तरह से उनका घर ही तो है जहाँ पर वे सुबह से शाम तक रहते हैं। आश्रम में उनको पूर्ण स्वतंत्रता है, जिस मरजी पेड़ पर चढें जिस मरजी पेड़ के फल तोड़ें। रिखिया पीठाधीश्वरी स्वामी सत्संगी का भरपूर स्नेह इन बच्चों को एक माँ की भाँति शाश्वत मिलता है। आश्रम से इन बच्चों को प्रतिवर्ष 7–8 (नए ड्रेसेस) विभिन्न कार्यक्रमों पर भेंट में प्रसाद स्वरूप दिए जाते हैं। इनके स्कूल की यूनिफार्म, किताबें, कापियाँ इत्यादि भी आश्रम से प्रतिवर्ष दी जाती हैं। संगीत, कम्प्यूटर और अंग्रेजी की शिक्षा भी ये बच्चे आश्रम में प्राप्त करते हैं विभिन्न संन्यासियों के द्वारा।

आश्रम के आध्यात्मिक वातावरण में इन बच्चों में भारतीय संस्कृति के संस्कारों की नींव बहुत गहरी पड़ी है। स्वामी जी ने इन बच्चों के लिए अन्न क्षेत्र भी निर्मित करवाया है ताकि कोई भी बच्चा भूखे पेट न सोए। ये बच्चे स्वामी जी को बहुत अधिक प्यार करते हैं। उनके निर्वाण के पश्चात् ये बच्चे उनकी उपस्थिति को रिखियापीठ की बहती हुई मन्द समीर में, नीले आकाश में अनुभव करते हुए वृहद साहस का परिचय दे रहे हैं।

संस्कृत के कठिन से कठिन श्लोकों का उच्चारण जब ये आदिवासी बच्चे करते हैं तो हम शहरों के पढ़े–लिखे लोग स्तम्भित रह जाते हैं। नवान्ह पारायण में रामायण की चौपाइयाँ मानों उनके मुख से बहती हैं पानी की तरह बिना किसी प्रयास के।

इस सब का श्रेय स्वामी जी को ही जाता है जिनके स्नेह ने इन गरीब बच्चों को एक ठोस आधार प्रदान किया है। विभिन्न कार्यक्रमों में पुस्तकें बाँटते एवं अन्य जिम्मेदारियों को निभाते हुए ये बच्चे सहज ही एक अद्‌भुत आत्मबल के स्वामी बन चुके हैं। उनके व्यक्तित्व को सजाने, सँवारने और निखारने का श्रेय पूर्णतया स्वामी जी को ही जाता है। भविष्य के लिए बच्चे उच्च शिक्षा ग्रहण करने के सपने देखते हैं और मेहनती बच्चों को आश्रम से अनुदान भी दिया जाता है। ये बच्चे ऐसे कमल के फूल हैं जो कीचड़ में खिल कर, अपनी आभा से समस्त विश्व को महकाएँगें। सन् 2009 में जब स्वामी जी ने इन बच्चों से पूछा, ''तुम्हारा पिता कौन है ? तुम्हें शिक्षा के लिए कौन भेजता है ?'' एक स्वर में सब ने कहा, ''आप।'' क्या है कोई सांसारिक व्यक्ति जो इतने बच्चों का स्नेह अर्जित करने का दंभ भरता हो ? आज स्वार्थ की इस दुनिया में ऐसा स्नेह ! सहज ही विश्वास नहीं होता। ये 1500 बच्चे प्रत्यक्ष प्रमाण हैं उस ईश्वरत्व का; जो स्वामी जी के रूप में रिखियापीठ की शोभा था, है और रहेगा।

''तुम लोग मुझे गुरु समझते हो, पर मैं तो स्वयं को आज भी एक शिष्य ही मानता हूँ अपने गुरु स्वामी शिवानन्द का।''

चेतना के उच्च स्तर पर पहुँचने के पश्चात् करोड़ों निम्न आत्माओं का मार्गदर्शन करके हजारों दिलों में अपना स्थान बनाने के बावजूद, स्वामी सत्यानंद ने स्वयं को कभी भी गुरु नहीं माना; गुरु घोषित नहीं किया। विश्व के अनेक देशों में उन्होंने योग का ध्वज लहराया और आश्रमों की स्थापना की। परन्तु उन्होंने इसका कभी भी अहंकार नहीं किया। वे सदा भीड़ भाड़ से बचते रहे और एकान्त वास करने की गहन इच्छा होने के बावजूद; अपने गुरु के अपरोक्ष निर्देशों का पालन करते हुए, अनेक भक्तों को दर्शन देते रहे। अपनी तपस्थली रिखियापीठ में उन्होने एक बहुत बड़े साम्राज्य की स्थापना की अनेक आश्रमों के रूप में। यह एक ऐसा साम्राज्य है जो रिखिया पंचायत व आस–पास की अनेक गरीब बस्तियों के उद्धार के लिए समर्पित है। वहाँ के गरीब परिवारों की देखभाल का जिम्मा लेते हुए उनका आर्थिक और नैतिक उत्थान भी स्वामी जी के संन्यासी कर्मयोग के रूप में कर रहे हैं। वहाँ के गरीब आदिवासी बच्चों (लड़कों और लड़कियों) में उन्होंने नैतिकता का एक ऐसा बीज बोया है जो विश्व को एक सशक्त आधार देगा ईमानदार नेतृत्व के रूप में। आज संपूर्ण विश्व भौतिकतावाद की चपेट में आ कर मानवता के दिव्य मूल्यों को भुला बैठा है यही बच्चे हमे एक नूतन आशा की किरण प्रदान करने में सक्षम होंगे।

ऐसे सद्‌गुरु के श्री चरणों में, मेरा शत्–शत् नमन है जिन्होंने अपने जीवन का एक–एक क्षण अपने गुरु की आज्ञाओं पर न्यौछावर किया। नहीं चाहा स्वयं के लिए कुछ भी ईश्वर कृपा के अतिरिक्त। अपना संपूर्ण जीवन मानवता के कल्याण में ही समर्पित किया आखिरी सांस तक किया। एक उदाहरण साबित किया समस्त शिष्यों के लिए अपने व्यवहार से, न कि अपने प्रवचनों से। मिलती है प्रेरणा मुझे वृहद् उनके कृत्यों से, उनके श्री वचनों से। चाहती हूँ जन–जन जाने कि आज भी धरा पर ऐसे महापुरुष हैं जो मोह माया के बंधनों से ऊपर हैं। किया त्याग उन्होंने पार्थिव देह का

तो क्या, जीवित हैं वे आज भी हम शिष्यों के दिलों में।

करती हूँ अनुभव पल–पल उनकी कृपा को और चाहती हूँ हर व्यक्ति उनके महात्म्य को जानें और उनके श्री चरणों से जुड़े। परहित की इसी भावना से प्रेरित होकर उनका चरित्र कलमबद्ध करती हूँ और जन–जन में निःशुल्क बाँटती हूँ।

दान व्यावहारिक रूप में

स्वामी सत्यानंद ने दान का एक व्यावहारिक रूप हम सब को दिया जो अत्यन्त सरल होने के साथ–साथ अत्यधिक प्रभावशाली भी है। उन्होंने कहा, ''जब तुम अपने बच्चे के लिए एक ड्रेस खरीदते हो तो एक गरीब बच्चे के लिए भी एक नई ड्रेस खरीद लो।'' मैंने उनकी इस सरल शिक्षा को जब व्यवहार में अपनाया तो मुझे बहुत अच्छा लगा। परन्तु अधिकतर लोग कुछ देने के बाद उस वस्तु का लेने वाला सदुपयोग करे ऐसा चाहते हैं। यदि वह व्यक्ति ऐसा नही करता, तो दान देने वाला बहुत दुःखी हो जाता है और ऐसे व्यक्ति को दान देने के बाद पछतावा भी करता रहता है। स्वामी जी से जब किसी ने यह कहा तो उन्होंने कहा, ''तुम्हें क्या करना है कि सामने वाला व्यक्ति उस दान दी हुई वस्तु का कुछ करता है या नहीं ? ईश्वर तुम्हें इतना कुछ प्रदान करता है तुम अनेक बार उसका दुरुपयोग नहीं करते हो क्या ?'' उनकी यह शिक्षा मुझे बहुत पसन्द आई और धीरे–धीरे अपने अनुभवों से समझ आने लगा कि यदि मैं स्वयं को कर्त्ता समझती हूँ तो देने का अभिमान आता है और उसके साथ–साथ अपेक्षा भी रखती हूँ धन्यवाद की। जब स्वामी जी की इस शिक्षा का गहन मनन चिन्तन किया और अपनाया तो अपेक्षा रहित दान का सुख अन्तर्मन में अनुभव हुआ। मेरे पास जो कुछ भी है उसको जरूरतमंदों के साथ बाँटने का एक प्रयास अब मैं सतत करती हूँ बिना किसी अपराध बोध के, बिना किसी अपेक्षा के।

सौंदर्य लहरी के प्रचारक

सौंदर्य लहरी श्री मत् आदिशंकराचार्य द्वारा विरचित देवी की आराधना है। यह 103 मन्त्रों का ऐसा संकलन है जो काफी कठिन संस्कृत भाषा में लिखा गया है। बीच में कुछ काल ऐसा आया कि यह आराधना लुप्तप्रायः ही हो गई थी। केवल दक्षिण भारत में ही कुछ लोग इन मन्त्रों का उच्चारण करते थे। यह आराधना अत्यधिक प्रभावशाली है आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक तापों का निवारण करने के लिए।

स्वामी जी ने इसका पुनरुत्थान किया और अपने सब शिष्यों को इसके पढ़ने के लिए प्रेरित किया। वे कहते थे, ''तुम इसका अर्थ जानने की कोशिश मत करो, केवल उच्चारण करो। ध्वनि की तरंगे बहुत अन्दर तक जा कर शुद्धि कर सकती हैं जो आज के युग के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।''

सन् 2008 नवम्बर में मुझे प्रसाद स्वरूप रिखियापीठाधीश्वरी स्वामी सत्संगी द्वारा लिखी गई पुस्तक मिली जिसमें सौंदर्य लहरी के मन्त्रों का अर्थ लिखा गया है। इस पुस्तक में प्रत्येक मन्त्र का वर्णन विस्तार से किया गया है और उसके चित्र के साथ, लाभों का वर्णन भी स्वामी जी ने किया है। इस पुस्तक को पढ़ने से मुझे बहुत प्रेरणा

मिली और मैंने अपने जीवन में सौंदर्य लहरी की साधना नियमित रूप से करने का निर्णय लिया। आरम्भ में मन्त्र कठिन अवश्य लगते हैं परन्तु रिखियापीठ (स्वामी जी की तपस्थली) की वेबसाईट से मैंने वहाँ की कन्याओं के सौंदर्य लहरी गायन को अपने कम्प्यूटर में उतार लिया। रोज सुनते–सुनते, पढ़ते–पढ़ते मुझे न केवल इस साधना के अनेक लाभ मिल रहे हैं अपितु कई श्लोक याद भी हो गए हैं।

स्वामी जी ने लिखा है, ''इस साधना को करने से आत्मबल मिलता है जिससे आत्मविश्वास दृढ़ होता जाता है।'' लेखन के इस कार्य में अनेक बाधाएँ आ रही हैं, परन्तु दृढ़ आत्मविश्वास के कारण मेरे कदम अभी तक रूके नहीं हैं। गुरु पर अथाह विश्वास होने के बावजूद, उनकी अनुपस्थिति में कभी–कभी बहुत विचलित भी हो जाती हूँ। परन्तु फिर अपने खोये हुए आत्मबल को जाग्रत करती हूँ और गुरुकृपा से इस कठिन पथ पर कदम बढ़ाती हूँ। (वेबसाईट : www.rikhiapeeth.net)

श्री स्वामी सत्यानंद–एक वैज्ञानिक

मिलती है प्रेरणा मुझे अतिशय स्वामी जी के योग अनुसंधानों से।
मिलती है प्रेरणा मुझे अतिशय स्वामी जी के योग प्रचार और प्रसार के प्रयासों से।
किया संघर्ष उन्होंने वृहद अपने गुरु के आदेश का पालन करने के लिए।
खाई ठोकरें अनेक अपने इस प्रयास में, अपने परिव्राजक जीवन में।
की अनेक विदेश यात्राएँ उन्होंने योग के प्रयोग बड़ी–बड़ी प्रयोगशालाओं में साबित करने के लिए।
जमाई अपनी सत्ता जन–जन के हृदय में अपने अनुसंधानों से, अपने अनुभवों से; न कि अपने कथन से।
बने वे विश्व सम्राट 12 वर्षीय राजसूय यज्ञ के द्वारा और लहराया योग का ध्वज उन्होंने विश्व के प्रत्येक देश में।
की भावना दृढ़ विश्वबन्धुत्व की, विश्वप्रेम की अपने धर्मनिरपेक्ष भाव से।
थे वे एक ऐसे दूत ईश्वर के जो सदियों तक जीवित रहेंगे अपने भक्तों के दिलों में; अपने भक्तों के कार्य कलापों में।
जीवन हो तो ऐसा हो जो बने एक ज्वलंत उदाहरण करोड़ों के लिए।
करे उत्थान अनेक निम्न आत्माओं का और बने पथ प्रदर्शक उनका अपने निर्वाण के पश्चात् भी।
यही है उद्देश्य इस मानव देह का, इस मानव जन्म का।
आदमी जन्म लेता है और गर बिना परोपकार के ही इस संसार से कूच कर जाता है तो होता है उसका इस धरा पर आना व्यर्थ।
ए मानव! तू जाग! स्वयं के दिव्यत्व को पहचान! कर काम इस देह से अनूठे, अनोखे ताकि करें याद लोग तुझे तेरे निर्वाण के पश्चात् भी।
मिलेगी कृपा तुझे उस परमपिता परमेश्वर की गर तू निःस्वार्थ रह पाएगा।
यह कोई कोल कल्पित कहानी नहीं, सच्चा अनुभव है। हिम्मत है तो आजमा के देख और अपने अनुभवों से ही मेरे कथन की सत्यता को परख !
चल मार्ग पर परोपकार के और बटोर खुशियाँ अनेक अपनी झोली में।

"तुम एक अमर आत्मा हो"

"जिस दिन यह आत्मा जाग जाएगी, इस धरा पर असंभव काम कर दिखाएगी।'' सन् 1994 में जब मैंने स्वामी जी की इस शिक्षा को पढ़ा तो मैं हैरान हो उठी। अनेक बार अविश्वास ने मेरे अंतर्मन को कचोटा, बहलाया और फुसलाया। परन्तु एक अद्वितीय, अनकही शक्ति ने मेरे मन को झंझोड़ा और स्वामी जी के इस कथन पर एक प्रयोग करने को कहा। मैंने भी सोचा, ' नुकसान तो कोई नहीं है, अगर मिलेगा तो मुझे लाभ ही मिलेगा।' इस प्रकार अपने निम्न मन की शक्ति को मैंने क्षीण किया और स्वामी जी की इस शिक्षा को मुश्किलों के समय दोहराया। और उनकी कृपा से धीरे–धीरे मेरी इच्छा शक्ति बढ़ने लगी और मुझे मुश्किलों के समय एक नूतन आत्मबल का अनुभव होने लगा।

अपने अनुभवों से मैं आश्चर्यचकित हो उठी। इस तरह हुआ मेरा सिलसिला शुरू, स्वामी जी की इस शिक्षा को दोहराने का और कठिनाई को समाप्त होते देखने का एक बार नहीं, अनेक बार ! मेहनत करते–करते, मैं इस कथन की सच्चाई को अनुभव करने लगी। जब मेरी पहली पुस्तिका ''सत्संग'' सन् 2008 में छपी तो किसी ने कहा, ''यह काम नहीं चलेगा, लोग पैसा देते नहीं है।'' मैंने तुरंत इस शिक्षा को याद किया और उन्हें चुनौती दी, ''मुझे देखना है, परीक्षण करना है परमहंस जी के आशीर्वाद का।'' आज सन् 2010 तक मेरी चौदह पुस्तिकाएँ छप चुकी हैं। यह लेख मैं पन्द्रहवीं पुस्तिका के लिए लिख रही हूँ। आज मैं पूर्णतया नतमस्तक हूँ अपने गुरु के श्री चरणों में, उनके कथनों की विश्वसनियता से, अपने सत्य अनुभवों से। (नोट–ये पुस्तिकाएँ निःशुल्क वितरणार्थ जन–जन के कल्याण के लिए दान की राशि के द्वारा छप रही हैं।)

श्री स्वामी सत्यानंद–एक शल्य चिकित्सक

स्वामी सत्यानंद स्वयं को एक शल्य चिकित्सक कहते थे। उन्होंने अनेक भक्तों के हृदय की शल्य चिकित्सा की। यह एक आध्यात्मिक शल्य चिकित्सा थी। काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार ने प्रत्येक व्यक्ति के दिल को कठोर बना दिया है। स्वार्थ और ईर्ष्या के मैल ने विभिन्न नाड़ियों को अवरूद्ध कर दिया है। ऐसे कठोर हृदय में दया, करुणा और प्रेम का नितान्त अभाव है। जिस प्रकार धमनियों में कोलस्ट्राल जम जाने से हृदय रोगी हो जाता है, उसी प्रकार इन दैवी गुणों के अभाव में सुख, शान्ति और प्रसन्नता का अनुभव होना असंभव है।

ईश्वर कृपा के अवतरण के लिए अत्यावश्यक है अंतर में करुणा भाव का होना; दयाभाव का होना। करुणा जो दूसरे के दुःख को दूर करने के लिए उद्यत हो। जब तक ऐसा भाव अन्तर में जाग्रत नहीं होता तो समझना चाहिए कि 'मेरा हृदय रोगी है।' कितने लोग अपनी सम्पत्ति को अपने से कम भाग्यशाली लोगों के साथ बाँटना चाहते है ? विश्वबन्धुत्व की बातें तो अधिकांश लोग भाषणों में ही करते हैं परन्तु व्यवहार पूर्णतया इसके विपरीत रहता है।

स्वामी जी की तपस्थली रिखिया (झारखण्ड) जाने के पश्चात् मैंने स्वयं के अंदर एक (remarkable) परिवर्तन अनुभव किया। वहाँ पर स्वामी जी के राजसूय यज्ञ में

अखण्ड दान की श्रृंखला प्रतिदिन देखी जा सकती थी। अनेक गरीब आदिवासियों और बच्चों को वस्त्र, कम्बल, चटाई अनाज और बर्तन इत्यादि देवी माँ के प्रसाद के रूप में दिए जाते थे प्रतिदिन। ऐसी निःस्वार्थता व्यवहार में देख कर भला कौन न प्रभावित होगा ?

योगनिद्रा के आविष्कारक

जनकल्याण के लिए स्वामी सत्यानंद ने योगनिद्रा का आविष्कार किया जो कि एक अत्यन्त सरल ध्यान का अभ्यास है। अपने अनुभवों से प्रेरित हो कर स्वामी जी ने इस अभ्यास पर अनेक प्रयोग किए और इसका सरल रूप विश्व को दिया। व्यक्ति के सो जाने के पश्चात् भी अवचेतन मन ग्रहणशील रहता है और उस अवस्था में यदि लगातार नियमित रूप से निर्देश दिए जाते हैं तो वे अवश्य फलित होते हैं।

यह अभ्यास इतना सरल और रोचक है कि बच्चे भी इसे करना पसन्द करते हैं और उनकी सृजनशीलता कई गुना बढ़ जाती है। इस अभ्यास के द्वारा बच्चों की स्मरण शक्ति और एकाग्रता को सहज ही बढ़ाया जा सकता है। कैंसर, गठिया जैसे दुःसाध्य रोगों पर भी इसका अप्रत्याशित प्रभाव पड़ता है और उनका पूर्णतया निराकरण हो जाता है।

आज तनाव और विषाद के कारण अनेक युवा भी मनोचिकित्सकों की शरण लेने पर मजबूर हो गए हैं। बढ़ती हुई कामनाओं के दुष्चक्र ने उनको एक स्वनिर्मित मकड़ी के जाल में जकड़ लिया है जिसमें से वे चाह कर भी निकल नहीं पा रहे हैं। संतोष का धन तो मानों कहीं खो ही गया है। आन्तरिक अशान्ति और चिन्ताओं से बच्चे, युवा, प्रौढ़ और वृद्ध भी निरन्तर व्यथित रहते हैं। जितना अधिक धन उतनी अधिक लालसाएँ ! भारतीय संस्कृति की पकड़, धन के पीछे भागते हुए इन व्यक्तियों से मानों कोसों दूर चली गई है। यही कारण है कि आज रोगों की संख्या में आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि हो गई है।

ऐसे समय योग निद्रा जैसे सरल और प्रभावकारी अभ्यास, व्यक्ति को उसके अन्तर से जोड़ते हुए, मरुस्थल के तपते रेगिस्तान में वर्षा की बौछार के समान सिद्ध हो सकते हैं। आवश्यकता है एक प्रयास की। योग निद्रा के कैसेट और सी॰डी॰ सरलता से प्रत्येक योगाश्रम में उपलब्ध हैं। (बिहार योग भारती जो कि विश्व का प्रथम योग विश्वविद्यालय है, मुंगेर (बिहार) में स्थित है।)

श्री स्वामी सत्यानंद का संकल्प

स्वामी जी के गुरु स्वामी शिवानन्द ने उनको 'सेवा, प्यार और दान' का संकल्प दिया, योग का प्रचार और प्रसार करने के साथ–साथ। स्वामी सत्यानंद ने अपना पूर्ण जीवन गुरु आज्ञा का पालन करते–करते व्यतीत किया। पूरे विश्व में योग का ध्वज लहराने के बाद, मुंगेर में योग का सतत प्रकाशवान सूरज उन्होंने स्थापित किया 20 वर्ष तक (1963 से 1983 तक)। फिर 1989 से 2009 तक उन्होंने रिखिया में 'सेवा, प्यार और दान' की अखण्ड ज्योति प्रज्वलित की।

रिखियापीठ सत्संग में उन्होंने कहा, ''मैं मोक्ष नहीं चाहता। मैं पृथ्वी पर बार–बार जन्म लेना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि इस बार मुझे एक गरीब माँ के गर्भ से जन्म

मिले ताकि मैं अपने माता–पिता और अपने सारे गरीब पिछड़ी जाति के लोगों को धर्म का पाठ पढ़ाऊँ।'' इतना ऊँचा संकल्प ! इतना अधिक सेवा का भाव ! ''भगवान वापिस टिकट के लिए चाहे दुगना अथवा तिगुना किराया माँगे मैं देने के लिए तैयार हूँ, पर मैं एक गरीब परिवार में जन्म लेना चाहता हूँ।'' धन्य है यह भारतभूमि जिस पर ऐसे सन्तों का जन्म हुआ, धन्य है वह माँ जिसने इतने महान सन्त की माँ बनने का गौरव प्राप्त किया।

''हर किसी को दूसरे के लिए जीना सीखना चाहिए। मेरा संकल्प है दूसरों की मदद करना उनके शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक विकास में।''

तृतीय खण्ड – रिखियापीठ

श्री स्वामी सत्यानंद की तपस्थली : रिखिया पीठ

रिखिया झारखंड का एक ग्राम है जो वहाँ के मशहूर तीर्थस्थल बैद्यनाथ धाम से 10 कि.मी. दूरी पर स्थित है। स्वामी जी ने सन् 1989 से सन् 2009 तक इस स्थान पर अनेक कठिन साधनाएँ की और आस–पास के ग्रामीण क्षेत्रों के उत्थान का वृहद कार्य अपने हाथ में लिया। इस इलाके के लगभग 1500 कन्याओं और बालकों को रिखिया आश्रम से अनेक सुविधाएँ शिक्षा आदि के रूप में दी जाती हैं हर वर्ष। इन कन्याओं और बालकों का चयन, वहाँ की पीठाधीश्वरी स्वामी सत्संगी द्वारा बहुत सावधानीपूर्वक सर्वेक्षण (Survey) के बाद किया जाता है। जो ग्रामवासी अपने बच्चों को स्कूल पढ़ने नहीं भेजते, काम पर भेजते हैं, उनको आश्रम से स्कूल यूनिफार्म, किताबें अथवा अन्य विभिन्न सुविधाएँ नहीं दी जाती हैं। ये बच्चे आश्रम में हो रहे अनेक कार्यक्रमों जैसे नवरात्रि अनुष्ठान, श्रीमद्भागवत शतचण्डी यज्ञ तथा योगपूर्णिमा आदि का बखूबी संचालन करते हैं। अंग्रेजी और हिन्दी दोनों भाषाओं में ये बच्चे बचपन से ही स्टेज संभालना सीख जाते हैं।

आश्रम की गतिविधियों का मुख्य केन्द्र है परमहंस अलखबाड़ा जहाँ स्वामी जी की समाधि आज है और स्वामी सत्संगी का निवास स्थान होने के साथ–साथ प्रशासन का मुख्य दफ्तर भी है। परमहंस अलखबाड़े में तुलसी कुटीर, गणेश कुटीर और रघुनाथ कुटीर हैं। इसके पीछे तपोवन है जहाँ बड़े कार्यक्रम जैसे शतचण्डी यज्ञ और योग पूर्णिमा आदि सम्पन्न किए जाते हैं; इन कार्यक्रमों में हजारों की संख्या में भक्त देश–विदेश से भाग लेने के लिए आते हैं। अलखबाड़ा के ठीक सामने के परिसर में यज्ञ शाला है जहाँ छोटे कार्यक्रम जैसे नवरात्रि अनुष्ठान, श्रीमद्भागवत और कृष्ण झूलन आदि किए जाते हैं। इसी परिसर में भोजन पकता है और सब लोग सेवा करते हुए और भोजन ग्रहण करते हुए देखे जा सकते हैं। आवासीय भवन चित्रकूट, त्रिकूट, अमृतकलश भी इसी परिसर में है, जहाँ अधिकतर महिलाएँ ही रहती हैं। अमृतकलश भवन के नीचे के भाग में एक छोटा–सा अस्पताल है जहाँ बाह्य रोगियों की चिकित्सा निःशुल्क की जाती हैं तथा दवाईयाँ भी रोगियों को दी जाती हैं। अमृत कलश के सामने एक छोटा–सा क्राईस्ट कुटीर (Christ) है जहाँ विदेशी प्रार्थना करते हुए देखे जा सकते हैं। आश्रम के अन्य आवासीय भवन हैं – शिवानन्द आश्रम, धर्मशाला, परमहंस, ऋषिकुंज। पंतजलि योग विश्वविद्यालय के चार भवन भी बन कर पूरे हो चुके हैं जिसमें अनेक प्रान्तों के आवासीय भवन हैं

उदाहरणतया – छत्तीसगढ़ भवन, उड़ीसा भवन, कलकत्ता भवन आदि। इस पूरे परिसर का नाम है 'विश्व योग केन्द्र। एक बहुत बड़ी यज्ञ शाला भी निर्माणरत है। उस यज्ञ शाला के साथ ही अन्नपूर्णा क्षेत्र है जहाँ गरीब बच्चों और वृद्धों को सुबह शाम को भोजन करवाया जाएगा। अत्यधिक गरीबी होने के कारण, इस क्षेत्र के अनेक बच्चे रात्रि को भूखे पेट ही सोते हैं। हम शहर के पढ़े लिखे लोग ऐसे कटु सत्य की कल्पना भी नहीं कर सकते। इन 20 वर्षों में इस प्रदेश का आमूल चूल परिवर्तन हो गया है। यहाँ के बच्चों को रोजगार एवं शिक्षा के अनेक उपयुक्त अवसर आश्रम द्वारा दिलवाए जाते हैं। यहाँ के लोग स्वामी जी को अपना ईश्वर मानते हैं और उनसे बहुत अधिक प्रेम करते हैं। और करे भी क्यों न, ऐसा निःस्वार्थ और निश्छल प्रेम कलियुग में कहाँ मिलता है ? अनेक साधु, नेता आदि बड़े–बड़े भाषण देने के बाद अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। इन गरीबों को अपने बच्चों जैसा समझ कर कौन गले लगाता है ? कुछ वर्षों से स्वामी जी ने इस स्थल का नाम 'रिखिया पीठ' रख दिया, यह शक्ति का स्थान जो है। माँ चण्डी, लक्ष्मी और सरस्वती की कृपा यहाँ सतत बरस रही है, अबाध रूप से। इसी वर्षा की एक बूंद ग्रहण करने के लिए अनेक तृषित भक्त विभिन्न अवसरों पर अनेक असुविधाओं के बावजूद रिखिया में देखे जा सकते हैं।

मेरा रिखियापीठ का आश्रम प्रवास–एक अनुभव

सन् 2007, मार्च में मुझे रिखियापीठ आश्रम प्रवास का प्रथम सुअवसर प्राप्त हुआ। आश्रम में विभिन्न प्रकार के लोगों से मेरा सम्पर्क हुआ जिनमें अनेक पूर्ण संन्यासी थे, अन्य कई कर्म संन्यासी थे तथा कई मेरे जैसे गृहस्थी भी थे। स्वामी सत्संगी ने अपने स्नेह की डोर से सबको बाँध रखा था। हम गृहस्थ चूँकि अधिक परिश्रम के अभ्यस्त नहीं होते, अतः मुझे तो हल्की–फुल्की सेवा का कार्य ही दिया गया था। उन्होंने मेरे स्वास्थ्य के अनुरूप ही मुझे चिकित्सालय में कर्मयोग दिया। मुझे घर में गर्म पानी से स्नान करने की आदत है, अतः उन्होंने कहा कि आप दिन में 12 बजे जब पानी टंकी में धूप से खूब गर्म हो जाता है, तब नहा लीजिए। शाम को चिकित्सालय भी मैं कमजोरी के कारण नहीं जा पाती थी। उसके लिए भी उन्होंने मुझे मना कर दिया और कहा,'' आप आश्रम को अपना घर ही समझिए, यदि आप का स्वास्थ्य ठीक है तो सेवा करिए अन्यथा आराम करिए।'' मैं इन सब बातों से अत्यधिक प्रभावित हुई और मेरा आश्रम प्रवास एक हद तक सुखद रहा।

चैत्र नवरात्रि में बिना नहाए ही रामायण पाठ में जाने की उन्होंने मुझे अनुमति दे दी। (क्योंकि स्वास्थ्य के कारण मैं सुबह जल्दी उठ कर नहा नहीं सकती थी।) अपने इन अनुभवों से मैं समझ पाई कि वे मेरे अन्दर को जान सकती हैं। स्वामी सत्यानंद ने भी गृहस्थों को ऊँचा स्थान दिया है। उन्होंने कहा, ''एक गृहस्थ कमाता है और हमें दान देता है, उसी दान राशि से हम लोक कल्याण के कार्य करते हैं। हम तो फक्कड़ संन्यासी, हमारे पास पैसा कहाँ से आएगा।'' शतचण्डी यज्ञ में भी वे बार–बार दोहराते, ''आप लोग जो भेंट स्वरूप लाते हैं, वही हम इन ग्रामवासियों एवं बच्चों में बाँट देते हैं।''

रिखिया से वापस आने के पश्चात् मैंने अनेक लोगों को जब स्वामी जी के इस कथन

के बारे में बताया तो उन्हें बहुत अच्छा लगा। गृहस्थ आश्रम के महत्व को समझते हुए, प्रत्येक व्यक्ति को भरपूर सम्मान दिया जाता है रिखिया आश्रम में।

रिखिया पीठ का नवरात्रि अनुष्ठान

सन् 2006 की चैत्र नवरात्रि में मुझे श्री स्वामी जी की तपोभूमि रिखिया के नवरात्रि अनुष्ठान में भाग लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अनेक भक्तों का आगमन इस बात का परिचायक था कि इस अनुष्ठान की बहुत महिमा है। नवरात्रि के कुछ दिन पहले से ही वहाँ की हवा में एक अलग तरह की सुगन्ध थी। प्रत्येक व्यक्ति आश्रम की साफ सफाई और साज सज्जा में जुटा था। बच्चे भी विभिन्न कीर्तन तैयार कर रहे थे। समय कब पंख लगा कर उड़ गया, पता ही नहीं चला !

नवरात्रि का कार्यक्रम बहुत ही मनमोहक था। सुबह 5 बजे योग कक्षा में हल्के फुल्के आसनों के पूर्व 11 गायत्री मंत्र, 11 दुर्गा गायत्री, 11 काली गायत्री और 11 सरस्वती गायत्री के मंत्रों का लय में उच्चारण 15 मिनट तक सब भक्तों को दूसरी दुनिया में ही पहुँचा देता था। इन मंत्रों का उच्चारण संगीत के साथ रिखिया पीठ की कन्याओं के द्वारा ही सम्पन्न होता था। आदिवासी कन्याएँ ! इतना शुद्ध उच्चारण ! इतना सुमधुर स्वर ! इसे श्री स्वामी जी की कृपा न कहें तो और क्या कहें ?

आश्रम में एक विवाहोत्सव का माहौल था। भोजन बनाने में अनेक भक्त स्त्री पुरुष दोनों ही खूब मन लगाकर सेवा कर रहे थे। बच्चे भी कुछ कम नहीं थे। झाड़ू से ले कर, भोजन परोसने और अन्य छोटे–छोटे काम बच्चे दौड़–दौड़ कर रहे थे।

सुबह 8 से 10 बजे तक रामचरित मानस का पाठ रिखिया पीठ की कन्याओं और बटुकों द्वारा नवान्ह परायण के नियमानुसार सम्पन्न किया जाता था। स्वामी सत्यासंगानंद इस पाठ में पूरा समय बैठती थीं। पाठ हिन्दी में होने के बावजूद अनेक विदेशी भी यज्ञशाला में रामायण के मंत्रों की तरंगों को आत्मसात करते हुए, ध्यान मुद्रा में दिखाई देते थे। मैं उन विदेशी भक्तों को देख कर यह सोचने लगी कि आज हम भारतीय अपने इन मूल्यवान ग्रन्थों की गरिमा को भूलते जा रहे हैं।

रामचरितमानस के पाठ में जब राम जन्म का प्रसंग आया तो उसे खूब उत्साह के द्वारा फूलों की वर्षा के द्वारा मनाया गया ! शंख की पवित्र ध्वनि से यज्ञ शाला कुछ देर के लिए गुंजायमान थी। एक पल को तो ऐसा लगा कि श्री राम जन्म यहीं रिखिया की यज्ञ शाला में होने जा रहा है। चारों ओर खुशी से उछलते कूदते बच्चे, फूलों की वर्षा करते हुए; पूजा का पवित्र जल आम्र पत्तों के द्वारा सब उपस्थित भक्तों पर छिड़क रहे थे । कैसा अद्भुत समॉ था! मेरी लेखनी उस दृश्य को शब्दों में बाँधने में असमर्थ है।

ठीक इसी प्रकार राम विवाहोत्सव भी धूमधाम से मनाया गया। श्री स्वामी जी ने राम और सीता के विवाह को एक आध्यात्मिक रंग देते हुए अपने प्रवचन में इसे आत्मा और परमात्मा का मिलन बताया है।

पाठ के पश्चात् सेवा; कर्मयोग के रूप में और भोजन का कार्यक्रम रहता था। सभी भक्तों को भोजन भारतीय संस्कृति के अनुरूप पत्तलों और दोनों में करवाया जाता था। अनेक स्त्री पुरुष 'अतिथि देवो भव' की परम्परा को जीवन्त रूप में अपने

व्यवहार से अनेकों का सिखा रहे थे। भक्तों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ने के पश्चात् भी सारा प्रबन्ध बहुत कुशलता से सम्पन्न हो रहा था। भोजन भी भरपूर मात्रा में था। नवरात्रि के छठे दिन परमहंस स्वामी निरंजानंद सरस्वती के आने से सब भक्तों का उत्साह दुगुना हो गया। उन्होंने अनेक भक्तों को दीक्षा भी दी। दोपहर में हर रोज योगनिद्रा से पूरे शरीर की थकान स्वतः ही दूर हो जाती थी। योगनिद्रा के पश्चात् सत्संग का आनन्द और भी अधिक बढ़ जाता था। मन की चंचलता एकदम शान्त हो जाती थी। सजगता की वृद्धि के कारण स्वामी सत्संगी और स्वामी जी के सत्संग से प्रत्येक भक्त पूर्ण लाभान्वित होता था।

स्वामी सतसंगी और स्वामी जी यज्ञ शाला के बाहर भी बहुत समय बैठते थे; भक्तों की समस्याओं का समाधान भी करते थे। कभी–कभी प्रश्नोत्तरी भी वहीं हो जाती थी। शाम को 5 बजे सौंदर्य लहरी के कुछ श्लोक; 9 बार दुर्गा जी के 32 नाम कन्याओं के साथ दोहराए जाते थे। कन्याओं द्वारा सम्पन्न मधुर कीर्तन, कन्याओं और बटुकों का नृत्य एक अजब समॉ बाँध देता था। स्वामी जी ने भी षष्ठी के दिन बच्चों के साथ नृत्य किया। धुन, ताल और लय मन को उत्तेजित करते हुए एक अनिवर्चनीय आनन्द से भर देती थी। अनेक भक्त स्वयं पर से नियंत्रण खो कर नाचने लगते थे।

वह एक अलग दुनिया है ! उस दुनिया में केवल आनन्द ही आनन्द है ! और अगर उसे परमानन्द कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। उस अमृत को पी कर ही उसके स्वाद का अनुभव किया जा सकता है! शब्द उस अमृत की झलक तो प्रस्तुत कर सकते हैं; परन्तु रोम रोम में उसका अनुभव करवाने में नितान्त असमर्थ हैं।

रामनवमी के पावन पर्व पर श्री स्वामी जी का आगमन सब भक्तों के अनुष्ठान का प्रतिफल ही तो था ! मानो उनकी कृपा, ऊर्जा चारो ओर एक तेज बारिश की तरह बरस रही थी ! प्रत्येक भक्त जहाँ कहीं भी बैठा था, उनके दर्शनों का लाभ लेने का प्रयास कर रहा था। ईमानदारी से यदि कहूँ तो मेरा मन पाठ से ज्यादा श्री स्वामी जी के दर्शनों में लग रहा था। बार–बार उनकी छवि को अपने हृदय पटल पर अंकित करने का एक असफल प्रयास मैंने किया। रामायण की पुस्तक हाथ में पकड़े; श्री स्वामी जी को देखते; 2 घंटे का समय मानो पंख लगा कर उड़ गया !

श्री स्वामी जी ने अपने प्रवचन में 'रामायण को एक रसगुल्ले की उपमा दी। उन्होंने कहा कि रसगुल्ला खाने के बाद ही उसके स्वाद का अनुभव किया जा सकता है। उसी प्रकार रामचरित मानस पढ़ने के बाद ही उसके लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं। समझ न भी आए तो पढ़ते जाओ। उन्होंने कहा कि रामचरितमानस का पाठ करने से भक्ति मिलती है और भक्ति से सब संकट दूर हो जाते हैं।" और मैं सोचने लगी कि रसगुल्ला हमें यदि बनाना नहीं आता; हम उसको खा तो लेते ही है !

अन्त में कीर्तन के पश्चात् श्री स्वामी जी द्वारा कन्याओं और बटुकों को पुरस्कार वितरण करवाना एक अनोखा संगम था। पुरस्कार वितरण के बाद कीर्तन में श्री स्वामी जी, स्वामी निरंजन और स्वामी सत्संगी भी नृत्य करने लगे ! नवरात्रि का अनुष्ठान अपनी चरम सीमा पर था। श्री स्वामी जी को ले कर स्वामी जी और स्वामी सत्संगी बाहर चले गए। श्री स्वामी जी ने कन्याओं और बटुकों के साथ प्रसाद ग्रहण किया। चन्द्रमौली जी और उनके सहयोगी तो इस कृपा से मानो बौखला ही गए।

भाग–भाग कर उनके लिए थाली और कटोरी लाए; परन्तु श्री स्वामी जी ने पत्तल पर ही रख कर प्रसाद ग्रहण किया। रसोई में काम करने वाले, श्री स्वामी जी की इस अनुकम्पा से अन्दर तक निहाल हो गए ! श्री स्वामी जी के जाने के पश्चात् स्वामी जी और स्वामी सत्संगी ने भी कन्याओं के साथ ही प्रसाद ग्रहण किया। मतलब और स्वार्थ की इस दुनिया में ऐसी सरलता कहाँ ? ऐसी निष्कपटता कहाँ ? हम गरीब बच्चों के साथ खाना तो बहुत दूर की बात उनको खाना खिलाने से पहले भी दस बार सोचते हैं !

रिखिया पीठ का राजसूय यज्ञ–एक अवलोकन

प्रभु की असीम अनुकम्पा से मुझे सन् 2006 नवम्बर माह में होने वाले राजसूय यज्ञ में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यद्यपि बहुत वर्षों से मैं इस राजसूय यज्ञ के बारे में सुनती थी, जाना भी चाहती थी, परंतु बहुत चाह कर भी इस सौभाग्य से वंचित रही। वर्ष 2006 में यह यज्ञ 21 से 25 नवंबर तक संपन्न हुआ। रिखिया झारखण्ड प्रांत में स्थित है। झारखण्ड कुछ वर्ष पहले तक बिहार राज्य का ही अंग था। यह एक अत्यंत गरीब और पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। यहाँ के निवासी निर्धनता को ही अपना भाग्य मानते हुए जीवन व्यतीत करते हैं। अशिक्षा, बेरोजगारी और निर्धनता सर्वत्र दृष्टिगत होती है।

1989 में प्रभु–प्रेरणा के फलस्वरूप स्वामी सत्यानंद ने रिखिया को अपनी साधना स्थली के रूप में चुना। 20 वर्षों तक योग का संदेश घर–घर फैलाते हुए उन्होंने विश्व के पहले योग विश्वविद्यालय को मुंगेर में स्थापित किया। यह योग की प्रथम ऐसी यूनिवर्सिटी है, जहाँ देश–विदेश के छात्रों को डिग्री कोर्स करवाए जाते हैं। स्वामी जी ने योग का ध्वज सारे विश्व में लहराया। सभी धर्म–प्रचारकों ने योग की प्रभुता को स्वीकार किया।

'योग स्वास्थ्य से जरूरी, योग जीवन से जरूरी।' –स्वामी सत्यानंद

वे मुस्लिम देशों ईराक–ईरान में भी योग का महत्व स्थापित करने में पूर्णतया सफल हुए। सद्दाम हुसैन ने भी उनकी शिक्षाओं को स्वीकार करते हुए उनका सम्मान किया। विश्व में किसी भी देश ने उनका विरोध नहीं किया। वे योग को संपूर्ण विज्ञान के रूप में स्थापित करने में भी पूर्णतया सफल हुए। गुरुदेव ने इस यज्ञ में बताया कि लोगों ने हर देश में उनके लिए दिल और पर्स दोनों खोल दिए। इस यज्ञ में भाग लेने वाले लगभग 1500 विदेशी योग साधक इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण थे। साधक भी ऐसे कि शौचालय भी पूर्ण मनोयोग से साफ कर रहे थे। हम सभी उनके समर्पण के प्रति नतमस्तक थे। 1995 में अपनी पंचाग्नि साधना समाप्त करने के पश्चात् स्वामी जी ने राजसूय यज्ञ प्रारंभ किया। पुरातन काल में बड़े–बड़े चक्रवर्ती सम्राट राजसूय यज्ञ किया करते थे। जैसे राजा युधिष्ठिर ने यह यज्ञ किया था। गुरुदेव ने स्वयं को दिलों का राजा बताते हुए इस परम पुनीत यज्ञ का शुभारंभ किया। इस यज्ञ का मुख्य बिंदु देवी माँ की आराधना है। पूरे विधि विधान से देवी माँ की पूजा बनारस से आए हुए विशेष पण्डितों द्वारा की जाती है। एक पण्डाल विशेष रूप से इस पूजा के लिए सजाया और सँवारा जाता है। देवी माँ की मूर्ति अथवा चित्र न रखकर वहाँ पर देवी माँ का एक मण्डल बनाया जाता है। इस मण्डल की संरचना

विभिन्न प्रकार के मनमोहक पुष्पों से की जाती है। उस मण्डल के सामने एक बहुत बड़ा हवन कुण्ड है जिसके ऊपर घी का पात्र टंगा रहता है। पाँच दिनों में सात बार दुर्गा सप्तशती के पूरे तेरह अध्याय पढ़े जाते हैं। जो भक्त जन इस पाठ में भाग लेते है उन्हें "पाठी" कहा जाता है और उनका विशेष सम्मान किया जाता है। उन पाठियों को प्रथम दिन उपहार स्वरूप एक विशेष अंग वस्त्रम्, रूद्राक्ष माला और "देवी" की पुस्तक दी जाती है। यह पाँच दिन का अनुष्ठान होता है जिसमें पाठ के साथ–साथ हवन भी लगातार चलता रहता है। यज्ञ के पाँचवे दिन विशेष मन्त्रों का उच्चारण और कन्या भोज होता है। उस दिन यज्ञ की अग्नि मंथन के द्वारा स्वामी निरंजन स्वयं प्रज्वलित करते हैं। उस दिव्य वातावरण में दैवी ऊर्जा का सतत प्रवाह होता रहता है जो शारीरिक, मानसिक अनेक रोगों को दूर करने के साथ–साथ आध्यात्मिक उत्थान में भी सक्षम है। गुरुदेव ने आराधना का ऐसा रूप विश्व के सम्मुख प्रस्तुत किया है, जो आज के परिवेश में नितांत महत्वपूर्ण है। रिखिया के निर्धन बच्चों को चुनकर 'कन्या और बटुक' का नाम देते हुए गुरुदेव ने उन्हें देवी माँ के रूप में पूजने की प्रथा को पुर्नजीवित किया है। हर बच्चा प्रभु का ही रूप होता है। बच्चा छल–कपट से दूर एकदम निर्मल स्वभाव का होता है। वह प्रभु का एक ऐसा दिव्य पुष्प है, जो प्रभु को अत्यधिक प्रिय है।

रिखिया के इन निर्धन बच्चों के लिए एक विद्यालय की स्थापना करते हुए उन्हें उच्च शिक्षा देने की भी पूर्ण व्यवस्था की है। यज्ञ के पांचों दिन पूरा पण्डाल इन कन्याओं के सुमधुर कीर्तन सुन–सुन कर मंत्रमुग्ध था। मंच में हिंदी और अंग्रेजी में इतना अच्छा संचालन ! मंत्रों का इतना शुद्ध उच्चारण ! स्त्रोत पाठ ! इतने छोटे बच्चे ! चारों ओर पुस्तकें वितरित करते हुए, विभिन्न स्थानों से आए हुए भक्तों और साधकों का मार्ग दर्शन करते हुए, हर स्थान पर ये कन्याएँ और बटुक एक योग्य शिक्षक के योग्य शिष्य की भाँति विचरण कर रहे थे।

हर रोज देवी माँ के प्रसाद के रूप में नई–नई पोशाकें इन बटुकों और कन्याओं को दी जाती थीं। गुरुदेव ने स्पष्ट रूप में कहा कि ईश्वर आराधना का यह एक सरल और सर्वोत्तम मार्ग है। उन्होंने छोटे बच्चों को प्रभु की ऊर्जा का माध्यम बताया है। पर मैं सोचने लगी माया को समझना और फिर उससे बचना क्या इतना सरल है ? इस संसार में जन्म लेने के तुरंत पश्चात् माया का प्रभाव बचपन के समाप्त होते ही धीरे–धीरे बढ़ने लगता है। प्रभु केवल प्रभु कृपा ही इसे दूर करने में समर्थ है। देवी माँ शक्ति का रूप हैं और यदि हम सच्चे मन, हृदय और प्राण से उनके श्रीचरणों में प्रार्थना करें, तो अवश्य ही वे अविद्या रूपी इस माया को हटा देगीं।

यहाँ मैं रिखिया की एक कन्या द्वारा दिया गया देवी माँ का संदेश लिख रही हूँ –

"मैं ही शक्ति स्वरूप हूँ। मेरा कोई धर्म, सम्प्रदाय या लिंग नहीं है। मैं केवल हृदय की भाषा समझती हूँ। मैं सब पर अपने प्यार और आशीर्वाद की वर्षा करती हूँ। यज्ञ की इस आराधना में स्वयं को पूर्णतया सजग रखते हुए, दिव्यस्पंदनों को अनुभव करो। सभी चीजों में मुझे देखो, अनुभव करो। मैं सर्वत्र हूँ। अपने चारों ओर, ऊपर–नीचे, दाएँ–बाएँ और अपने अंतर में मुझे और केवल मुझे ही देखो।"

स्वामी सत्यानंद और रामकृष्ण परमहंस दोनो ने एक ही संदेश दिया है कि बालक की तरह सरल और सच्चे दिल से की गई प्रार्थना देवी माँ अवश्यमेव सुनती हैं।

जिस तरह माँ अपने बच्चों की सब माँगे पूरी नहीं करती, विशेषकर जो माँगें उनके लिए हानिकारक हैं, उसी प्रकार देवी माँ भी हमारी सारी माँगें पूरी नहीं करती। अतः प्रार्थना के समय 'यथायोग्यं तथा कुरू' अवश्य कह देना चाहिए। कन्या भोज के दिन उन्होंने कहा कि ऐसी भावना रखो कि तुम इन्हें सजा रहे हो तो देवी माँ को ही सजा रहे हो, इन्हें भोजन करा रहे हो तो देवी माँ को भोजन करा रहे हो। इस यज्ञ में इसी भाव के साथ देवी माँ की आराधना करो। यदि तुम आत्मसात कर सके तो समझना कि तुम्हारा यज्ञ में आना सफल हुआ अन्यथा नहीं।

और मैं विचार करने लगी कि कितने लोग इतनी सरलता से एक गरीब बच्चे को घर जाने के बाद भी देवी समझ पाएँगे। उन्होंने रिखिया पीठ को इन कन्याओं और बटुकों की महिमा ही बताया। पाँच दिन पूरे समय हम गुरुदेव से ही जुड़े हुए थे। जब गुरुदेव पण्डाल में थे, तो कन्याओं के सुमधुर गीत गूँजते रहते थे। स्वामी शिवानंद की शिक्षाओं का मूर्त रूप गुरुदेव अपने हर कृत्य, हर शब्द से प्रत्यक्ष प्रमाणित कर रहे थे। स्वामी शिवानंद ने कीर्तन को मानव के उत्थान का, ईश्वर प्राप्ति का, भाव समाधि प्राप्त करने का सरलतम मार्ग बताया है। यज्ञ में सुबह 7 बजे रामायण पाठ होता था। उसके पश्चात 10 बजे तक पूजनीय गुरुदेव के प्रवचन के साथ अत्यंत सुंदर कीर्तन होते थे । कीर्तन इतने मनमोहक थे कि प्रत्येक व्यक्ति उन्हीं को गुनगुनाता रहता था।

'सेवा, प्यार और दान' यह तीन स्वामी शिवानन्द के अष्टांग योग के प्रथम तीन चरण हैं। सेवा का सरल और व्यावहारिक रूप रिखिया के कण–कण में दृष्टिगोचर होता है। यज्ञ के पांच दिन ट्रक भरकर देवी माँ को अर्पित करने के लिए गाँववासियों की आवश्यकतानुसार चटाई, कम्बल, बर्तन, चावल इत्यादि नित्य लाया जा रहा था और गुरुदेव की उपस्थिति में वह प्रसाद हजारों ग्रामीणों को देवी माँ के प्रसाद के रूप में अर्पित किया जा रहा था। इतना सामान ! इतना दान ! भला कौन दे सकता है ? गुरुदेव ने स्पष्टता से बताया कि यह दान नहीं है, माँ का प्रसाद है। अतः प्रेमपूर्वक ही इसका वितरण किया जाए। बहुत वर्ष पहले मैंने गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'कल्याण' में पढ़ा था। 'हमें सेवा स्वीकार करने वाले व्यक्ति का धन्यवाद करना चाहिए। यदि वह न होता हमें सेवा का यह सौभाग्य कैसे प्राप्त होता।' मुझे वह लेख बहुत अच्छा लगा था। रिखिया में मुझे उस लेख का पुनः सहज स्मरण हो आया। यह भी समझ आया कि जब दान प्रभु के प्रसाद के रूप में दिया जाता है, तो दान का अभिमान आ ही नहीं सकता। अभिमान ही एक ऐसा दुर्गुण है, जो प्रभु और जीव के मध्य की सबसे ठोस दीवार है। अहंकार के गलते ही प्रभु की कृपा सहज बरसने लगती है।

अपने महान गुरु स्वामी शिवानंद जी के योग को गुरुदेव व्यावहारिक रूप में स्वयं अपनाकर अन्य लोगों को प्रेरित कर रहे हैं। यज्ञ की समाप्ति से पहले उन्होंने स्वयं को हनुमान कहा। सच ही तो है, हनुमान सदा अपने स्वामी श्री राम की सेवा में ही रत रहते थे। सेवा, सेवा, सेवा। इसके अतिरिक्त हनुमान ने कभी कोई साधना नहीं की। स्वार्थ और अहंकार का सर्वत्र राज्य है। आज मानव मानवता को भुला बैठा है। ऐसे समय में 'सेवा, प्यार और दान' जैसे गुण कहाँ दिखाई देते हैं ? जहाँ कहीं भी इन शिक्षाओं का इतने बड़े पैमाने पर व्यावहारिक रूप दिखाई दे, वहाँ जीवन दिव्य

नही तो और क्या होगा ? सीता राम के विवाह को गुरुदेव ने जीव की आत्मा का परमात्मा से मिलने का एक प्रासंगिक रूप बताया है।

गुरुदेव ने स्वयं को एक कुशल हृदय शल्य चिकित्सक बताते हुए कहा कि इन पाँच दिनों में आप नकली दिल लगाकर इस दैवी कृपा को ग्रहण करो। उन्होंने कहा कि मेरे दिल खोल देने के बाद आप दोनों हाथों से प्यार और दान लुटाएँगे। जहाँ कहीं पर ऐसी दिव्यता, दानशीलता, प्रेम और करुणा की वर्षा अबाध रूप से हो रही हो, वह स्थान तो स्वर्ग से भी ज्यादा रमणीय है। रिखिया पीठ, भारत की इस पावन भूमि पर एक ऐसा स्थल है, जहाँ देवता भी निवास करने में अपना सौभाग्य समझेंगे। फिर हम साधारण मानवों का तो कहना ही क्या ? वहाँ का जर्रा–जर्रा, कण–कण एक ऐसी दिव्यता से ओत–प्रोत है, जो असाधारण है। यज्ञ की समाप्ति पर हम सब के मन में यही भाव था कि अरे ! समय पंख लगाकर इतनी जल्दी उड़ गया ! पर उन दिनों की स्मृतियाँ हमारे जीवन की अमूल्य निधि हैं। एक ऐसी निधि जिसको दोनों हाथों से लुटाने पर भी समाप्त नहीं होगी, अपितु अक्षय भण्डार की भाँति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ेगी।

तो आओ! हम सब अपने गुरुदेव के पदचिन्हों पर चलने का प्रयास करें। स्वामी शिवानंद की शिक्षाओं को मूर्तरूप देने में अपने पूजनीय गुरुदेव का हाथ बटाएँ। यदि हम ऐसे पावन यज्ञ में एक गिलहरी भी बन सके तो राम हम पर कृपा किए बिना नहीं रह सकते। और गुरुदेव वे तो इतने दयालु और कृपालु है कि हमें अपनी कृपा के असीम सागर में गोते लगवाते हुए हमारी नाव को किनारे ले जाएँगे। ऐसे सद्गुरु के श्री चरणों में शत् शत् प्रणाम !

रिखिया पीठ की कन्याएँ और बटुक (बालक)

सन् 2005 में, श्री स्वामी जी की असीम अनुकम्पा से मुझे उनकी तपस्थली रिखियापीठ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पिछड़ा हुआ क्षेत्र, मिट्टी के घर, टूटी–फूटी सड़कें, मेरे लिए एक नूतन अनुभव था। देवघर से टैक्सी में रिखिया जाते हुए, मैंने गांव वालों की गरीबी और स्कूली पोशाक में छोटे–छोटे बच्चों को देखा। गाड़ी लेट होने के कारण, स्वामी निरंजन से मिलने का निर्धारित समय निकल चुका था। अतः हमें दफ्तर के बाहर काफी देर इन्तजार करना पड़ा, स्वामी जी से मिलने के लिए।

वहाँ पर बैठे–बैठे, रिखिया के कन्याओं और बटुकों को साईकिलों से आश्रम के अन्दर आते देखा, ये बच्चे सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों से, आश्रम में अंग्रेजी कम्प्यूटर और संगीत की शिक्षा ग्रहण करने आते हैं। एक विदेशी संन्यासिन उनकी शिक्षिका थी। पूर्ण अनुशासन का पालन करते हुए ये बच्चे कतार बद्ध पंक्तियों में आते जाते हुए देखे जा सकते थे। सन् 2006 में मुझे श्री स्वामी जी की अनुकम्पा से शतचण्डी यज्ञ में 5 दिन भाग लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हजारों लोग, पूरे विश्व भर से, इस यज्ञ में भाग लेने के लिए आए हुए थे। इन सब शिष्यों को पुस्तकें बाँटना, एकत्र करना, वेदी के चारों तरफ पहरा देना, ये बटुक और कन्याएँ बखूबी कर रहे थे।

कन्याओं द्वारा गाए गए मनमोहक कीर्तन और नृत्य हम सब भक्तों का मन मोहित करने में सक्षम थे। अनेक स्त्रोतों और श्लोकों का पाठ भी कन्याएँ एकदम शुद्ध

संस्कृत में बखूबी कर रहीं थी। अंग्रेजी और हिन्दी में मंच संचालन भी एकदम प्रभावशाली था। नित्य प्रतिदिन देवघर से प्रातः काल आते हुए, इन बच्चों को कच्चे घरों से निकलकर फुदक–फुदक कर आश्रम आते हुए हम लोग देखते थे, तो सहसा उनकी प्रतिभा पर रश्क आता था।

गरीबी में पलने बढ़ने के पश्चात् भी श्री स्वामी जी की असीम अनुकम्पा के वे पात्र हैं। अनेक संन्यासी और भक्त उनको ईर्ष्या मिश्रित सम्मान के साथ देखते थे। सुबह से शाम तक ये बच्चे, जगह–जगह पर आश्रम में देखे जा सकते थे। यज्ञ में विभिन्न भक्तों द्वारा लाए गए उपहार, देवी प्रसाद के रूप में इन बच्चों को श्री स्वामी जी स्वयं देते थे।

मार्च 2007 में मुझे इन बच्चों को करीब से देखने और जानने का एक सुअवसर चैत्र नवरात्रि के अनुष्ठान में प्राप्त हुआ। सुबह 5 बजे के कार्यक्रम में सर्वप्रथम कन्याओं का कीर्तन और स्त्रोत पाठ ही होता था। हम लोग 3.30, 4.00 बजे उठकर, भाग–भाग कर जब यज्ञ शाला पहुँचते तो ये बच्चे मुस्तैदी से यज्ञशाला का पूरा संचालन करते हुए दिखाई देते थे। शाम को 6.30 से 7.00 बजे तक ये बच्चे यज्ञशाला में कीर्तन करते, नाचते, पुस्तकें वितरित और एकत्र बखूबी करते थे। उन बच्चों को देख कर, मैं आश्चर्य चकित हो उठी। इतनी जिम्मेदारी, इतनी लगन और इतनी सरलता ! शहरों में प्रत्येक सुख सुविधा उपलब्ध होने के बावजूद भी हमारे बच्चे इतनी सुबह उठ कर इतनी सेवा नहीं कर सकते। लगातार 9 दिन यही कार्यक्रम था। हम लोग कभी–कभी सुबह पहुँचने में लेट हो जाते थे। परन्तु बच्चे नहीं। रामचरित मानस का नवाह्न पारायण पाठ भी इन्हीं कन्याओं और बटुकों के द्वारा ही सम्पन्न हुआ।

एक तरफ इन बच्चों की प्रतिभा और दूसरी तरफ इनका भोलापन मेरे मन के अन्तरतम् कोने को छू गया। श्री स्वामी जी का कथन कि ये बच्चे दैवी ऊर्जा का माध्यम हैं, मुझे एकदम सही प्रतीत होने लगा। आज आवश्यकता है कि शहरों के बच्चे और माता–पिता जागें। अपने बच्चों को कमजोर न बनाएँ। बच्चे भी, जो सुख सुविधाएँ प्राप्त हैं, उनका उपयोग अपनी आंतरिक प्रतिभा को जाग्रत करन में करें। दूरदर्शन इत्यादि के कुप्रभावों से बचते हुए, अपने जीवन को एक सार्थक दिशा देने के लिए एक उच्च लक्ष्य का चुनाव करें। तभी तो होगा एक नव भारत का निर्माण ! ऐसे बच्चे बनेंगे एक नवयुग के कर्णधार ! एक ऐसा युग जहाँ सर्वत्र प्रेम ही प्रेम होगा। प्रत्येक मानव ''वसुधैव कुटुम्बकं'' की दिव्य भावना से ओत–प्रोत होगा। भारत पुनः सोने की चिड़िया बनेगा। प्रत्येक भारतवासी को भारतीय होने पर गर्व होगा !

रिखियापीठ का नृत्यांगनाएँ

रिखियापीठ की आदिवासी लड़कियाँ इतना सुन्दर नृत्य करती हैं कि देखने वाले दाँतों तले ऊँगली दबा लेते हैं। भरतनाट्यम, कुचिपुड़ी, ओडिसी, कत्थक जैसे शास्त्रीय नृत्य ये कन्याएँ एक प्रोफश्नल (Professional) नर्तकी की भाँति सरलता से कर पाती हैं, केवल कुछ ही मास के प्रशिक्षण के पश्चात्। यही एक सद्गुरु के आशीर्वाद का फल है जो इन कन्याओं और बटुकों (बालको) की विभिन्न प्रतिभाओं

के रूप में सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा है।
स्वामी जी की तपस्थली केवल कहने भर के लिए ही पिछड़ा प्रदेश है, अंग्रेजी बोल कर स्टेज संभालती हुए ये कन्याएँ, शहरों के बच्चों को भी मात दे रही हैं। मेहनत और संस्कारों का एक अनोखा मिश्रण इन गाँव के बच्चों में मिलता है। अपने घरों में जा कर यही कन्याएँ चारा काटना, गोबर उठाना और अन्य कई कार्य सरलता से करती हैं नित्यप्रति।
ऐसे सद्गुरु का सान्निध्य कई जन्मों के पुण्य संचित हो जाने पर ही मिलता है। अथवा हो सकता है कि ये बच्चे कोई देवी और देवता हों जो जनकल्याण के लिए इस प्रकार गरीबी में फल फूल रहे हैं और लाखों करोड़ों को प्रेरित कर रहे हैं अपने उदाहरण से मेहनत और पूजा पाठ के लिए।

चतुर्थ खण्ड–सत्संग श्री स्वामी सत्यानंद के संग

मनी राम एक गुण्डा

राजसूय यज्ञ के 12 वें वर्ष में श्री स्वामी के दर्शनों का सौभाग्य तो लगभग हर रोज प्राप्त हुआ,परन्तु वचनामृत का पान करने का सौभाग्य आखिरी दिन ही सब भक्तों को प्राप्त हुआ। देवी माँ की आराधना करते हुए भी स्वामी निरंजनानंद सरस्वती जी के दर्शन करते हुए भी सब भक्तों का सारा ध्यान श्री स्वामी जी के ऊपर ही केन्द्रित था। हालांकि श्री स्वामी जी ने एक स्थानीय समाचार पत्र में यह संदेश भी दिया कि वे चाहते थे कि सब लोग अपना पूरा ध्यान देवी माँ पर ही केन्द्रित करें। परन्तु चाह कर भी हम सब ऐसा करने में असमर्थ रहे। चौथे दिन तो मैंने भरसक कोशिश की, परन्तु अपनी कोशिश में नाकामयाब रही। निम्न स्तर के हम सब भक्तों के लिए तो श्री स्वामी जी ही भगवान का साक्षात् स्वरूप थे। अतः मंत्र पढ़ते हुए, कीर्तन गाते हुए, चाहे अनचाहे सब का ध्यान उन्हीं की ओर था।
और पाँचवे दिन, उम्मीद के बिना श्री स्वामी जी अपने शिष्यों की पुकार सुन कर सुबह–सुबह ही पण्डाल में आ गए। हम सब की खुशी से बाँछे खिल गई। जो जहाँ था, वही से उचक–उचक कर अपने गुरु की एक झलक पाने की कोशिश कर रहा था। और श्री स्वामी जी ने तो मानों पिछले 4 दिनों की कसर पूरी करने की ठान ली थी। कहते हैं कि सच्चे संत बालकों की तरह भोले और निष्कपट होते हैं।
श्री स्वामी जी ने अपनी आध्यात्मिक यात्रा के एक महत्वपूर्ण राज का पर्दाफाश किया, एक सरल बालक की भाँति। उन्होंने कहा कि जब मैं ऋषिकेश अपने गुरु के आश्रम में रहता था, तो मेरे साथ मनीराम नाम का एक गुण्डा भी रहता था। यह गुण्डा कोई और नहीं मेरा मन ही था। कभी कहता तुम यहाँ क्यों पड़े हो ? शादी क्यों नहीं कर लेते ? कभी कहता हट्टे–कट्टे हो, कहीं जाकर नौकरी क्यों नहीं कर लेते। इस तरह की अनेक अटकलें दिन–रात लगाता रहता था। जब मैं गुरु जी से कहता कि यह मनी राम बहुत तंग करता है। तो गुरुदेव कहते कोई बात नहीं, ध्यान मत दो। तुम अपना काम करते रहो।"
उनकी बात सुन कर मुझे बहुत अच्छा लगा। हम साधक हर समय इस मनीराम नामक गुण्डे से आतंकित रहते हैं। अनेकों बार पूजा में भी शेखचिल्ली की तरह सपने बुनते रहता है और हम अधिकांश समय व्यथित ही रहते हैं। श्री स्वामी जी के

इस राज को हम सबको सतत याद रखना चाहिए। और मन के भटकने से परेशान न होते हुए गुरु जी के द्वारा प्रदत्त साधना पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ करते रहना चाहिए। धन्य हैं ऐसे सद्गुरु जो अपने शिष्यों का उत्थान करने के लिए सतत कार्यरत हैं। उन्नति के उस शिखर पर पहुँच कर भी, उनकी नम्रता हम सब को अन्तर्तम तक भिगो रही है।

श्री स्वामी जी आज के भगवान ?

राजसूय यज्ञ के 12 वें वर्ष में यज्ञ के अन्तिम दिन, श्री स्वामी जी सत्संग का सौभाग्य हम सब भक्तों को प्राप्त हुआ। श्री स्वामी जी ने कहा वह एक क्षत्रिय कुल में जन्मे थे। त्रेता युग के श्री राम उनके पूर्वज थे। उन्होंने कहा कि राम और रामायण एक ऐतिहासिक सत्य है। आज भी रामेश्वरम् और लंका के बीच का सेतु इस बात का साक्षी है। उस काल का एक पत्थर यहाँ पर भी रखा है। आप चाहें तो देख सकते हैं।
6 वर्ष की अल्पायु से ही उनको उच्च आध्यात्मिक अनुभव होने लगे थे। अनेक संतों का आशीर्वाद भी उन्हें अल्पायु से ही प्राप्त होने लगा था। धनी परिवार का होने के बावजूद उन्होनें 19 वर्ष की आयु में ही घर त्याग दिया और संन्यास के उच्च आदर्शों को अपनाया। अपने गुरु स्वामी शिवानंद जी आश्रम में उन्होंने 12 वर्ष कठोर श्रम करने के पश्चात् अपने परिव्राजक जीवन का शुभारंभ किया। अपने गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन, योग का प्रचार और प्रसार करने के लिए ही समर्पित किया। आज 84 वर्ष की उम्र में भी वह स्वयं को एक शिष्य ही मानते हैं और आज भी अपने गुरु स्वामी शिवानंद की शिक्षा सेवा, प्यार और दान को एक व्यावहारिक रूप में जन साधारण को प्रदान कर रहे हैं। रिखिया जो कि झारखंड का एक अत्यधिक पिछड़ा ग्रामीण क्षेत्र था, आज प्रगति के पथ पर पूर्णरूपेण अग्रसर हो चुका है। वहाँ की कन्याओं और बालकों को देख कर आज सहज ही विश्वास नहीं होता कि इनके माता–पिता गरीब या अनपढ़ हैं। वे बच्चें स्कूल में पढ़ते हुए, आश्रम में अंग्रेजी, कम्प्यूटर और कीर्तन भी सीख रहे हैं। कन्याओं और बटुकों का नृत्य और कीर्तन अत्यधिक मनमोहक हैं।
मंच संचालन से लेकर पुस्तकों का वितरण और टीका लगाने का काम ये बच्चे बखूबी कर रहे हैं। आश्रम के पवित्र वातावरण मे ये कलियाँ बखूबी पल्लवित और पुष्पित हो रही हैं। संस्कारों की गहरी खेती उनके रोम–रोम को एक असीम आनन्द और प्रसन्नता से भर दे रही है। इन सब बच्चों का जन्म श्री स्वामी जी के रिखिया आगमन के बाद ही हुआ। गाँव वालों को घर बना कर दिए गए हैं। सर्वेक्षण के पश्चात्, सुयोग्य वयस्कों को आर्थिक स्वावलंबन के लिए रिक्शा, दुकान अथवा गाय भी दी जाती हैं। सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों से आने वाली कन्याओं को, इस वर्ष अनेक साईकिल भी भेंट में दी गई ताकि वे अपनी उच्च शिक्षा सरलता से जारी रख सकें।
आज के युग में , पग–पग पर स्वार्थ का साम्राज्य है, भाई–भाई का गला काटने को तैयार है, ऐसा निस्वार्थ काम करने वाले को अवतार न कहा जाए तो और क्या कहें? इस वर्ष यज्ञ में लगभग 15000 लोगों ने भाग लिया। अपने शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उत्थान के लिए जो भी उनकी शरण में जाता है, निराश नहीं होता।

उनके शिष्यों की बढ़ती हुई संख्या इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है। गत वर्ष श्री स्वामी जी ने स्वयं को हनुमान कहा था। हनुमान जी तो सतत सेवा के ही प्रतीक हैं। श्री स्वामी जी का संकल्प है कि वह अगला जन्म किसी गरीब घर में ही लेना चाहते हैं। सबसे पहले वह अपने माता–पिता को शिक्षित करके बाकी समाज का उत्थान करना चाहते हैं। उन्होंने अपने संदेशों में बार–बार कहा है कि मुझे मोक्ष नहीं चाहिए।

भगवान से क्या माँगें ?

श्री स्वामी जी ने कहा कि माँगना मानव का स्वभाव हैं। हम कभी संतान माँगते हैं, कभी संपत्ति और कभी धन। 1 नहीं 1000 कामनाएँ हमारे मन को निरन्तर मथती रहती हैं। एक लड़का हलवाई से दोना माँगने गया। उसने नहीं दिया। तब उसके पिता ने कहा कि बेटा 50 पैसे का दही ले आ, दही के साथ दोना मुफ्त ही मिल गया। उसी प्रकार हम हजार चीज माँगने की अपेक्षा यदि भगवान से उनकी कृपा माँगते है तो वह सबसे अधिक प्रभावशाली उपाय है सब कुछ प्राप्त करने का।
उन्होंने कहा कि यज्ञ का आखिरी दिन बहुत ही महत्वपूर्ण है, परन्तु यदि आप सोचते रह जाओगे तो देवी जी चली जाएँगी और आप कुछ भी नहीं पा सकोगे।
भगवान से केवल और केवल उसकी कृपा माँगो। एक कृपा में ही आपको सब कुछ मिल जाएगा। भगवान की कृपा तुम्हारे अन्दर ही है। पर उसे पाने के लिए कभी–कभी कुछ छोड़ना भी पड़ता है। आप लोग 15 साल के लिए अमेरिका चले जाते हो, पैसा कमाने के लिए। परन्तु भगवान की कृपा प्राप्त करने के लिए 12 साल आश्रम में आ कर नहीं रह सकते। जिन्दगी एक जुआ है और भगवद् कृपा एक लाटरी है। जिन्दगी का फैसला कौन करेगा ? लग गया तो छक्का, नहीं तो कंगाल। भगवान की कृपा अनिवार्य है। संसार के इस समुद्र में हम बिल्कुल अकेले हैं। कोई सहारा नहीं है। डूब गए तो ? संसार के जीवन साथी भी मौत के समय अकेले छोड़ देते हैं। अतः सच्चा सहारा तो केवल ईश्वर ही है। ईश्वर कृपा से असंभव भी संभव है।

रामायण का महत्व

रिखिया पीठ के चैत्र नवरात्रि के अनुष्ठान में मुझे भाग लेने का सुअवसर प्राप्त हुआ। राम नवमी के पावन पर्व पर श्री स्वामी जी ने दर्शन दिए। उनका दर्शन देना और राम जन्म का सुअवसर एक साथ सब भक्तों के तन मन को भक्ति के एक अद्भुत रंग से सराबोर कर रहा था।
श्री स्वामी जी के शब्दों में ''9 दिन का छोटा–सा अनुष्ठान बच्चों ने सम्पन्न किया, ये इनके जीवन की बहुत बड़ी उपलब्धि है। 9 दिन ये जिनका गुणगाण कर रहे थे, वे एक महापुरूष थे। उन्होंने हमारे सामने एक आदर्श रखा। रसगुल्ला कैसे बना ? किसने बनाया ? यह जानना दूसरी बात है, रसगुल्ला खाना अलग बात है। इसी प्रकार रामचरित मानस है। सब विद्वानों ने कहा है कि जीवन में भक्ति सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, संसार की सब वस्तुएँ मिल जाती है परन्तु भक्ति कहाँ मिलेगी ? मन्दिर में ? भजन में ? कीर्तन में ? कुछ ठीक नहीं। केवल एक भक्ति मिल जाने से सारे संकट दूर हो जाते हैं। रामचरित मानस का पाठ करने से भक्ति मिलती है।

रिखिया आने के पश्चात् मैंने पंचाग्नि साधना की और प्रतिदिन रामायण का पाठ शुरू किया। शाम को 4 बजे पढ़ने बैठता था, अगले दिन 4 बजे तक पूरा करके ही उठता था।
आज आप लोग भी तो पंचाग्नि साधना कर रहे हैं। काम, क्रोध, लोभ, मद और मत्सर नामक 5 अग्नियाँ आपको निरन्तर जला रही हैं। जब मैं 4 आग के बीच में बैठता था तो पाँचवी आग सूर्य का ताप होता था। इस साधना से शरीर का पानी सूख जाता है। आप लोग भी अन्दर की आग में झुलस रहे हैं। मैं उन दिनों नारियल का पानी, मट्ठा इत्यादि लेता था। अन्दर की आग को शान्त करने के लिए आप लोग रामायण का पाठ करिए। जीवन में आध्यात्मिक परिवर्तन आएगा।
रिखिया से आने के पश्चात् श्री स्वामी जी के प्रवचन से प्रभावित होकर मैंने हर रोज रामायण का अध्ययन प्रारंभ किया। मुझे यह लिखते हुए अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि मेरा मन पहले से बहुत अधिक शान्त हो गया है। क्रोध का भी 95 प्रतिशत निराकरण हो गया है। जीवन की संपूर्णता का अनुभव सहज ही होने लगा है।

अपनी शक्ति को पहचानो और जगाओ

राजसूय यज्ञ के समापन अवसर पर श्री स्वामी जी ने प्रत्येक व्यक्ति को अपनी शक्ति को पहचानने का महत्वपूर्ण संदेश दिया। उन्होंने कहा कि वेद भगवान की वाणी हैं। ऋग्वेद में कहा गया है – "प्रज्ञानंब्रह्म" अर्थात् तुम ही अन्तिम सत्य हो। यजुर्वेद में कहा गया है – अहम् "ब्रह्मास्मि" अर्थात् मैं ही ब्रह्म हूँ। सामवेद में कहा गया है – "तत् त्वम् असि" अर्थात् तुम वही हो। अथर्ववेद में कहा गया है – "यह आत्मा ही ब्रह्म है।"
समुद्र में पानी और बूंद में क्या फर्क है ? सोने के टुकड़े और अलंकार में क्या फर्क है। कुछ नहीं। केवल वाणी में, बोलने में फर्क है। सोने की अंगूठी बनी, अतः उसे अंगूठी कहना पड़ता है। उसी प्रकार तुम भी एक दिव्य शक्ति हो। गरीबी अमीरी, जात–पात सब समाज के बनाए हुए हैं। सुख–दुःख, दिन–रात तो सब आते ही रहेंगे। सबसे अधिक महत्वपूर्ण है कि व्यक्ति अपनी शक्ति को पहचाने। यदि तुम अपने अन्दर उतर सकोगे तो बहुत कुछ पा सकोगे। चेतना के विभिन्न स्तर होते हैं। एक स्तर हैं जागृत अवस्था का। दूसरा स्तर नींद का। तीसरा स्तर है तुरीया अवस्था का। यही वह अवस्था है जहाँ कोई गुरूत्वाकर्षण नहीं, कोई डर नहीं, कोई दबाव नहीं। चेतना के 7 स्तर होते हैं। एक स्तर पर मानव को आंतरिक प्रतिभा मिलती है। इसी प्रतिभा से कोई वैज्ञानिक, लेखक अथवा कलाकार बनता है। योग के द्वारा अपनी चेतना को धीरे–धीरे अन्तर्मुखी बना सकते हैं। अपने लिए एक लक्ष्य का चुनाव करने के पश्चात् उसको प्राप्त करना उतना महत्वपूर्ण नहीं है। एक दिशा मिल जाने से ही सब काम सध सकते हैं।

कन्या का महत्व

राजसूय यज्ञ के अन्तिम दिन श्री स्वामी जी ने सब भक्तों को ज्ञान गंगा में भिगोया। उन्होंने कहा कि भारतीयों को यह बताने की कतई जरूरत नहीं है कि कन्या देवी का साकार रूप है। जिस प्रकार पत्थर में शिवलिंग की पूजा की जाती है, विष्णु जी

की पूजा के लिए शालीग्राम रहता है, उसी प्रकार देवी जी की पूजा के लिए कन्या एक सशक्त माध्यम है। निराकार की पूजा प्रत्येक के लिए संभव नहीं है।
ईसाई धर्म में भी वर्जिन मेरी एक कन्या ही थी। देवी भागवत में कन्या को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। हम कन्या के रूप में देवी जी का आह्वान करते हैं। इस देश में प्रत्येक नवरात्रि में कन्या को देवी मान कर पूजा जाता है, यह एक अच्छी सामाजिक परंपरा है। जीव में द्वैत बुद्धि है। वह निराकार पर ध्यान नहीं कर सकता। 13 वर्ष तक कन्या में अद्वैत बुद्धि होती है, अतः वह ईश्वरीय ऊर्जा का सुचालक होती है। जिस प्रकार तांबा बिजली का सुचालक होता है, बिजली उसमें से निर्बाध गति से पार हो जाती है, उसी प्रकार कन्या के द्वारा सफलतापूर्वक दैवी ऊर्जा का संचालन संभव है।
यहाँ पर देवी का विग्रह तैयार किया गया है। जिसका कोई आकार नहीं, वह निराकार होता है। जिसका कोई रूप नहीं, वह अरूप होता है। सोने का क्या रूप ? मिट्टी का क्या रूप ? उसी प्रकार सब रूप देवी का रूप। कन्या भोज के द्वारा देवी जी को सम्मानित किया गया। उनको नए वस्त्र पहनाए गए, अलंकारो से सजाया गया, पूरे सम्मान के साथ उनकी जूठन को ही माँ के प्रसाद के रूप में सबने स्वीकार किया। श्री स्वामी जी ने कहा कि कन्याओं के द्वारा ही देवी माँ की असीम कृपा हम सब को प्राप्त होगी।
आज समाज में कन्या एक अवांछित प्राणी समझी जाती है। दहेज के कारण। पैदा होते ही कन्या की हत्या एक साधारण बात बन गई है। ऐसे समय श्री स्वामी जी का यह संदेश अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। उनके परिव्राजक रथ में भी मैंने यह संदेश पढ़ा था जिस घर में कन्या नहीं है, वह सबसे अधिक दरिद्र है।

विदेशी भक्त

स्वामी सत्यानंद जी की तपस्थली रिखियापीठ में देशी और विदेशी भक्तों का अनोखा संगम देखने को मिलता है। गत वर्ष 2006 के शतचण्डी यज्ञ में लगभग 1500 विदेशी भक्तों को देवी माँ के कीर्तनों पर झूमते देख कर, मेरे आश्चर्य का पारावार न रहा। और इस वर्ष 2007 में 12 वर्षीय राजसूय यज्ञ के समापन अवसर पर विदेशी भक्तों की संख्या 3000 के आस–पास रही होगी।
इस वर्ष स्वामी निरंजनानंद सरस्वती जी ने भी स्वयं सब भक्तों के साथ मनमोहक कीर्तनों पर नृत्य किया। एक बार तो स्वामी जी ने कुर्सी पर चढ़ कर, सब के साथ योग की भंगिमाओं के साथ अनोखा नृत्य स्वयं भी किया और सबसे करवाया भी। वह एक अलग दुनिया थी। ऐसा समॉ, मानो देवता भी उतर कर पृथ्वी पर आ गए हों। अनेक क्लबों के बैण्ड के साथ मैंने अनेक वर्ष नृत्य किया, परन्तु इतना हार्दिक आनन्द कभी भी अनुभव नहीं हुआ।
यज्ञ के अन्तिम दिन श्री स्वामी जी ने अपने सत्संग में कहा कि विदेशी भक्तों के आने से भारत को बहुत फायदा है। भारत एक गरीब देश है। ये विदेशी बहुत अमीर हैं। अनेक देश एकदम पुराने जमाने के महाराज की भांति हैं। हमें वे लोग निश्चित रूप से आर्थिक मदद कर सकते हैं और कर भी रहे हैं। आज समाज में ईसाई मिशनरी के द्वारा धर्म परिवर्तन केवल अनपढ़ लोगों का होता है। कोई भी

प्रतिभाशाली व्यक्ति अपना धर्म परिवर्तन नहीं करता। उन्होंने कहा कि ऐसा कानून बनने से भारत को नुकसान होगा। विदेशी बहुत प्रतिभाशाली हैं, हमें उनसे सीखना चाहिए, न कि उनको भगाना चाहिए।
यज्ञ के आखिरी दिन मुझे श्री स्वामी जी के इस कथन का प्रत्यक्ष प्रणाण मिला। उन की कृपा के फलस्वरूप, मैं विदेशी भक्तों के बीच में जा बैठी, स्वामी जी के सतत दर्शन का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। मैंने देखा कि वे लोग जमीन पर बहुत ही मुश्किल से बैठे हुए थे। क्योंकि उनको तो नीचे चौकड़ी मार कर बैठने की आदत नहीं होती। श्री स्वामी जी का सत्संग तो हिन्दी में चल रहा था और उन लोगों को कुछ समझ में भी नहीं आ रहा था। इन सब परेशानियों के बावजूद वे धैर्य से एकाग्र होकर, गुरु कृपा को अपने अन्दर समेटने का अनथक प्रयास कर रहे थे। जब मैंने उनको उस सत्संग का अंग्रेजी अनुवाद देना प्रारंभ किया तो उनको बहुत अच्छा लगा। उत्सुकता से आस–पास वाले अंग्रेजी के जानकार माँग–माँग कर उन कागजों को पढ़ने लगे। मेरा तहे दिल से शुक्रिया भी उन्होंने अदा किया।
मुझे उनकी बुद्धिमानी और समझ से बहुत कुछ सीखने को मिला। उनका देवी जी कुछ स्त्रोतों का अंग्रेजी अनुवाद भी मुझे वहाँ मिला। उसमें लिखा था कि हमें सतत मानसिक रूप से सजग और सतर्क रहना होगा। तभी हम बीच–बीच में बोले गए इन स्तोत्रों का पाठ कर सकेंगे। कितना कठिन कार्य हैं। कितनी गहरी श्रद्धा और विश्वास चाहिए ऐसी भक्ति के लिए। अनेक भारतीय पाठी अर्थात् पाठ पढ़ने वाले, थोड़ी–सी भी असुविधा होने से चिड़चिड़ाते ही रहते थे। अन्य भक्तों को कोसते हुए देखे जा सकते थे। अपने अन्तरमन में मुझे महसूस हुआ कि हमारे देश में आकर हमारी संस्कृति और सभ्यता को ये लोग कितनी लगन और आत्मीयता से अपना रहे हैं। उनको केवल मंत्रों की तरंगो से ही गहन शान्ति और प्रसन्नता का अनुभव हो रहा था और यदि अनुभव नहीं भी हो रहा था, तो उसको प्राप्त करने का एक दृढ़ प्रयास कर रहे थे। विभिन्न देशों से आए बहुत भक्त तो अंग्रेजी भी नहीं जानते थे। उनकी भक्ति और दृढ़ विश्वास देख कर मेरा मन श्रद्धा से नतमस्तक हुआ।

स्व निर्देश

स्वामी सत्यानंद ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि व्यक्ति के जीवन में स्व निर्देश एक रामबाण का कार्य कर सकता है। यदि थोड़ी सी भी श्रद्धा और विश्वास के साथ गुरुदेव की इस सरल शिक्षा का प्रयोग हम अपने जीवन में करते हैं तो अनेक आश्चर्यजनक परिणाम स्वतः ही दृष्टिगोचर होते हैं।
जब मैंने श्री स्वामी जी की इस शिक्षा से प्रेरित होकर स्व निर्देश को अपने जीवन का अंग बनाया तो मैं इसकी सरलता और प्रभावों से अभिभूत हो उठी। श्री स्वामी जी ने लिखा है कि स्व निर्देश देने का सबसे अच्छा समय रात को सोने से पहले अथवा ध्यान के अभ्यास के बाद है। उस समय मन सबसे अधिक शान्त होता है। जब मन शान्त होता है, तभी उसकी ग्राह्य शक्ति सर्वाधिक रहती है। आज हर एक व्यक्ति कुछ न कुछ परेशानियों से घिरे हुए ही जीवन व्यतीत कर रहा है और जब ये परेशानियाँ हद से बढ़ जाती हैं तो अनेक रोगों के रूप में प्रकट होती हैं। योग में रोग के कारण का निवारण शिथिलता के अभ्यासों के द्वारा सर्वप्रथम करवाया जाता

है। आसन और प्राणायाम के अभ्यासों के साथ–साथ यदि हम शिथिलता के समय स्व–निर्देश का प्रयोग करते हैं तो अल्प काल में ही आश्चर्यजनक लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं।

अनेक दुःसाध्य रोगों में यदि स्व निर्देश का प्रयोग नकारात्मक चिंतन को समाप्त करने के लिये किया जाता है तो रोगी को अत्यधिक मानसिक शान्ति की प्राप्ति होती है। योग निद्रा में लिये गये संकल्प का संबन्ध एक हद तक स्व निर्देश से ही तो है। मैं ठीक हो रहा हूँ, प्रभु मेरे साथ हर समय हैं। भय के समय इस वाक्य को दोहराने से एक हद तक भय का निवारण संभव है। आरंभ में हो सकता है कि यह कठिन लगे, परन्तु विश्वास के साथ लिया गया स्व निर्देश परिणाम अवश्य लाता है।

अनेक मनोवैज्ञानिक इसे बार–बार दोहरा कर एक चिकित्सा पद्धति के रूप में भी प्रयोग करते हैं। श्री स्वामी जी ने इसे एक सशक्त प्रक्रिया के रूप में प्रयोग किए जाने का विकल्प हम सब को दिया है।

कुंडलिनी

पुरुष कहाँ हैं ? वह घट–घट में है। वह हृदय में है। चेतना का वह स्थान कहाँ है ? वह कुंडलिनी में है। कुंडलिनी मूलाधार चक्र में सोई हुई है। उसका असली स्थान स्वाधिष्ठान चक्र है। परन्तु वह वहाँ से गिरकर मूलाधार में जा कर सो जाती है। आज के युग में कुंडलिनी बहुत महत्वपूर्ण है। यह कोई कल्पना नहीं है। यह एक ठोस सत्य है। कुंडलिनी एक दैवी शक्ति है, जो मूलाधार से होते हुए सहस्त्रार तक जाती है। जब सहस्त्रार से वापस लौटती है तो अमृत गिराते हुए आती है। वह अमृत जहाँ–जहाँ गिरता है, वहाँ सिद्धि प्राप्त होती है।

सौंदर्य लहरी में भी इस की चर्चा है। किसी भी ऋषि, मुनि से पूछो, यह एकदम सत्य है। मानव तन बहुत भाग्य से मिलता है। हम केवल शरीर का बाह्य रूप देखते हैं। संत कबीर ने कहा है कि इस घट में 7 समुद्र और 6 लाख मोती हैं। हम सीमित चेतना के द्वारा इस शरीर को नहीं समझ सकते। शरीर के आंतरिक रूप के बारे में जानने के लिए गीता का 11वाँ अध्याय पढ़ो। उसमें अर्जुन ने अपना ही विराट रूप देखा था। शरीर में दिव्य शक्ति कुंडलिनी सोई हुई पड़ी है। जिस प्रकार लकड़ी में आग, तिल में तेल छिपा होता है, उसी प्रकार हम सब के अन्दर यह शक्ति है। इसको अनेक तरीकों से जागृत किया जा सकता है। क्रिया योग उन में से एक तरीका है।

यज्ञ भी एक तरीका है, इसे अनुपाय तंत्र कहा जाता है। यज्ञ में बैठ कर आप कुछ भी नहीं कर रहे केवल इन शक्तिशाली तरंगो को आत्मसात कर रहे हैं। कुंडलिनी कभी–कभी जाग जाती है, फिर सो जाती है। गलत समय पर जाग जाने से व्यक्ति हत्या भी कर सकता है। तुम्हारे अन्दर इसको संभालने की शक्ति भी होनी चाहिए। यहाँ पर हम अनुपाय तंत्र ही कर रहे हैं।

अनुपाय तंत्र से शक्ति जाग भी सकती है। इस शक्ति के जागने पर व्यक्ति संत, महात्मा अथवा भविष्य वक्ता बन सकता है। सहस्त्रार में जब शक्ति का मिलन शिव से होता है तो उच्च चेतना का अनुभव होता है। वहाँ पर बुद्धि का कोई काम नहीं

केवल असीम आनन्द ही आनन्द का अनुभव होता है। धन्य हैं ऐसे संत जो जन साधारण के आत्मिक उत्थान के लिए इतने बड़े यज्ञों का आयोजन कर रहे हैं। ऐसे संतों को मेरा शत शत प्रणाम !

यथा योग्यं तथा कुरू

सन 2006 में नवम्बर में जब मैं शतचण्डी यज्ञ में भाग लेने के लिये रिखिया गई, तो वहां श्री स्वामी जी के मुखारविंद से गिरते हुए अनेक हीरे, मोती मैंने अपनी झोली में एकत्र किये। उनकी शिक्षाएँ न केवल सरल थीं अपितु हास्य मिश्रित होने के कारण मन के किसी कोने में गहरे तक उतरती चली गई। श्री स्वामी जी ने इस शिक्षा पर बहुत जोर दिया। उन्होंने कहा कि यदि हम अनावश्यक इच्छाओं का दमन करते हुए, अपने भाग्य की डोरी प्रभु के हाथों में सौंप देते हैं तो अनेक समस्याओं, दुविधाओं और परेशानियों से बच सकते हैं।

और यह सच भी है। ईश्वर आपका परमपिता है। वह जानता है कि हमको जीवन में कब क्या चाहिए। वह हमें अपने कर्मों को सुधारने का अवसर देते हुए, हमारी पल–पल रक्षा करता है। जरूरत है अपने भीतर के दृढ़ विश्वास को जगाने की। अपने स्त्रोत से जुड़ने की। अपने परमपिता परमेश्वर की महिमा स्वीकर करने की।

यदि हम अपने जीवन में सजगता के साथ ईश्वर के गुणों का वरण करते हैं, तो वह दयालु, कृपालु पिता हमारी झोली दिव्य रत्नों से परिपूर्ण कर देता है। ईश्वर को करुणानिधि, दयानिधान, निष्काम, निःस्वार्थ कहा गया है, लिखा गया है। यदि हम ईश्वर के अनेक गुणों में से एक गुण भी व्यवहार में ला पाते हैं, और एक छोटे बच्चे की भाँति अपनी नैया को उसके सुपुर्द करते है तो वह अवश्य दोनों हाथों से हमें संभालते हुए मालामाल कर देता है।

हमारे जीवन में दुःख का करण हम स्वयं है। अपनी इच्छाओं, महत्वकांक्षाओं को यदि हम प्रभु के चरणों में समर्पित कर सकें तो निश्चित रूप से अभंग शान्ति का अवतरण हो पाता है। हमें आवश्यकता है अपनी विश्वास को दृढ़ बनाने की ! अपना बचपन वापस लाने की ! जैसे एक छोटा बालक अपने माता–पिता पर पूर्ण विश्वास करता है, उसी प्रकार निश्छलता और निष्कपटता से हम पग–पग पर प्रभु से प्रार्थना करें और उनके निर्णय पर भरोसा करें। प्रभु तो घट–घट वासी हैं। उनका निवास तो भक्त का हृदय है और भक्ति गुणों के प्रत्यारोपण, अवगुणों के निराकरण में, इच्छाओं के दमन में ज्यादा पुष्पित और पल्लवित होती है। दिखावे का पूजा पाठ, बाह्य आडम्बर, दुनिया को तो कुछ समय के लिए छल सकते हैं, उस परमपिता परमेश्वर को नहीं।

तो आओ, गुरुदेव की इस सरल शिक्षा का अभ्यास अपने जीवन में करें और एक नए सवेरे का दर्शन करें। जब इस शिक्षा का पालन करते–करते हमारे अन्दर का सूरज उगेगा तो सर्वत्र ज्ञान का प्रकाश फैल जाएगा। और ऐसे में दुःख, चिन्ता और अशान्ति का अन्धकार उसी प्रकार गायब हो जाएगा, जिस प्रकार सूर्य के उदय होने से रात्रि का अन्धकार भाग जाता है।

चाँद की यात्रा

शतचण्डी यज्ञ में स्वामी सत्यानंद ने अपने प्रवचन में चाँद पर जाने, ले जाने की पुनः

पुनः चर्चा की। सब उपस्थित भक्तों का हँस–हँस कर बुरा हाल था। और सच भी है, हम अज्ञानी उनकी ज्ञानप्रद सरल बातों की गहराई तक कहां पहुँच पाते हैं ? गुरुदेव ने ये भी कहा कि चाँद पर जाने का किराया कई हजार डॉलर है। यदि मैं जीवित रहा तो स्पॉन्सर कर दूँगा। उस समय मुझे यह तो समझ आया कि किराए का अर्थ प्रभु नाम स्मरण से है। क्योंकि उन्होंने यह भी कहा कि अपना बैंक बैलेंस बढ़ाते जाओ। परन्तु गहराई तक मैं नहीं पहुँच पाई थी। अब गुरुदेव ही की कृपा से धीरे–धीरे मुझे उनके इस सरल कथन का अर्थ समझ में आ रहा है।

कुंडलिनी योग में विभिन्न चक्रों का वर्णन आता है और आनन्द की पराकाष्ठा तो सहस्त्रार चक्र में ही प्राप्त होती है। जब व्यक्ति सेवा करते–करते, अपने गुरु की आज्ञा पालन करते–करते, आत्म भाव को धारण करते हुए आत्मशुद्धि कर पाता है, तब श्री स्वामी जी अपने व्यक्तिगत विमान में ऐसे शिष्य को अपने साथ चाँद पर ले जाते हैं।

चाँद पर पहुँचने के पश्चात् साधक का मैं रहेगा या नहीं, परन्तु श्री स्वामी जी सरीखा चालक उस यात्रा को सुखद–सुखमय और आनन्दमय अवश्य बना देता है। उठो, जागो गुरुदेव दोनो बाँहे फैला कर अपने योग्य शिष्यों को पुकार रहे हैं ! और मजे की बात तो यह है कि विमान में बैठने का, वहां तक पहुँचने का सरल सूत्र नाम स्मरण, सेवा, प्यार और दान के रूप में हमें दे भी रहें हैं। धन्य हैं ऐसे सदगुरु !

प्रभु यंत्री, मैं यंत्र

श्री स्वामी जी ने अपने प्रवचनों में यह सरल शिक्षा बार–बार दोहराई है। परन्तु हम में से कितने हैं जो उनकी इस सरल शिक्षा व्यावहारीकरण कर पाते हैं। अधिकतर जीवन इच्छाओं के पीछे दौड़ने में ही व्यतीत हो जाता है। अधूरी इच्छाएँ और उनके न पूरी होने की त्रासदी अथवा उनको पूरा करने का प्रयास, शरीर और मन से संपूर्ण मानव जीवन इसमें ही बीत जाता है।

यह जीवन प्रभु ने अपना उत्थान करने के लिए प्रदान किया है। कितने खेद की बाद है कि हम इसको व्यर्थ ही गवाँ देते हैं। स्वामी निरंजनानंद सरस्वती ने भी अपने प्रवचन में कहा कि मानव का अधिकांश जीवन तो कर्तापन के अभिमान में ही बीत जाता है। गत वर्ष राजनाँदगाँव में उन्होंने कहा कि यदि हारमोनियम यह सोचने लगे कि वह स्वर निकाल रहा है तो क्या संभव है ? उसी प्रकार हम भी एक यंत्र ही तो हैं ! मैंने तुरन्त ऐसा सोचा।

स्वामी जी ने श्री स्वामी जी की पंचाग्नि साधना के बारे में बताते हुए कहा कि यह एक प्रायश्चित् साधना है। जब भी हमारे मन में कर्त्तापन का भाव आता है, उसका प्रायश्चित करना आवश्यक है। हम लोग तो हमेश ही कर्ता भाव में रहते हैं ! कुछ भी अच्छा काम करते हैं तो अहंकार हमारे इस कर्तापन का ही द्योतक है ! स्वामी जी ने कहा कि यदि आप एक अच्छा काम करते हो तो कहते हो यह हमने किया। और यदि कुछ बुरा हो जाता है, तो कहते हो भगवान की ऐसी ही इच्छा थी हम क्या करें ? अच्छे काम का श्रेय तो खुद ले लेते हो, बुरे काम की जिम्मेवारी ईश्वर पर डाल देते हो। मैंने सोचा कि स्वामी जी एकदम सही कर रहे हैं। जब हम स्वाद के कारण कुछ

बदपरहेजी कर लेते हैं और बीमार हो जाते हैं, तो ये मानने के बजाय की हमने गलती की हैं, हम भगवान की ऐसी ही इच्छा थी, कह कर अपने आप को सांत्वना देने लगते हैं। अनेकों बार अपनी किस्मत का रोना रो कर भी उस तकलीफ को झेलते रहते है।

जीवन के अनेक दुःखों और तकलीफों से बचना एक हद तक संभव है, यदि हम श्री स्वामी जी की इस शिक्षा का मनन, चिन्तन करते हैं और इस पर पूर्ण विश्वास करते हुए, अपने जीवन में अपनाते हैं। उदाहरणतया – यदि हमारे पेट में दर्द है, तो हम पहले तो यह सोचें कि इसका कारण क्या है ? अगला कदम होना चाहिए कि मैं तो केवल एक यन्त्र हूँ ; अतः मुझे इस शरीर की तकलीफ से क्या लेना देना है। अब जब हमारा पंखा खराब हो जाता है तो उसकी देखभाल का जिम्मा तो हमारा रहता है, पंखे का तो नहीं। इसी प्रकार हम भी उस परमपिता की देखरेख में हैं, वह स्वयं हमारी मरम्मत करेगा। हमें ठीक करेगा।

अपनी गल्तियों को आत्मनिरीक्षण के द्वारा समझते हुए, उनको सुधारने का दृढ़ निश्चय करते हुए, यदि हम सच्चे मन से ईश्वर से प्रार्थना करते हैं, तो वह मदद अवश्य करता है। ईश्वर के चरणों में समर्पण का यह पहला चरण है। आवश्यकता है कि हम सन्तों की वाणी पर पूर्ण विश्वास करें, श्रवण के साथ–साथ मनन चिन्तन करते हुए, निदिध्यासन करते हुए, उसे अपने जीवन का एक अंग बनाएँ। धन्य है ऐसे सदगुरु जो हमारे कल्याण के लिए हमें इतनी सरल शिक्षाएँ प्रदान कर रहे हैं !

भक्ति का भोजन

श्री स्वामी जी की असीम अनुकम्पा से मुझे और मेरे पति को परम गुरु स्वामी शिवानन्द के जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में आयोजित श्री मद् भागवत् की पवित्र कथा श्रवण करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। श्री गोविन्द गिरी महाराज के द्वारा की गई इस कथा का समस्त भक्तों ने भरपूर रसास्वादन किया। रिखिया पीठ के आस–पास के ग्रामीण क्षेत्रों के अनेक ग्रामीण वासियों ने भी इस कथा में पूरे उत्साह से भाग लिया।

छोटे बच्चों से लेकर वृद्धों का उत्साह देखते ही बनता था। रिखिया पीठ, श्री स्वामी जी की एक ऐसी तपस्थली है जिसको तीर्थ कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। यह एक ऐसा तीर्थ है जहाँ गरीबों को नारायण मान कर न केवल भरपूर सम्मान दिया जाता है अपितु उनकी अनेक आवश्यकताएँ भी विभिन्न उत्सवों पर प्रसाद के रूप में पूरी की जाती हैं।

कथा के सातवें दिन महा प्रसाद था। उसी दिन सब भक्तों को श्री स्वामी जी के दर्शनों का सुअवसर भी प्राप्त हुआ। श्री स्वामी जी के आगमन से सब भक्तों की खुशी का पारावार न रहा। कथा वाचक श्री गोविन्द गिरी महाराज जी ने तो श्री स्वामी जी की नारायण की ही भाँति अर्चना करते हुए उनकी आरती भी उतारी। पूरे तीन घंटे श्री स्वामी जी यज्ञशाला में उपस्थित रहे। उनकी कृपा और ऊर्जा का अनुभव प्रत्येक भक्त अपने हृदय में सहज ही करता रहा। श्री स्वामी जी के अमृत वचनों को अपनी लेखनी में बाँधने का एक छोटा सा प्रयास मैंने किया जो इस प्रकार है –

दरिद्रता पाँच प्रकार की होती है। आज कलियुग में व्यक्ति धन की कमी को ही दरिद्रता मान बैठा है। रिखिया में भी पहले धन की कमी थी। सब लोग देवघर से ही

आना जाना करते थे। परन्तु अब रिखिया गरीब नहीं रहेगा। पिछले 10 वर्ष में यहाँ चारों तरफ सम्पन्नता का प्रभाव प्रत्यक्ष दिखाई देता है।

अनके संत महात्माओं ने भक्ति को एक अनमोल रत्न बताया है। बाकी सब धन नाशवान हैं। भक्ति का धन कभी भी नष्ट नहीं होता। पीले–पीले तू हरि नाम का प्याला। इस प्याले को पीकर हो जा तू मतवाला।

अनादि काल से संतों ने इसे पिया और यह एक ऐसा नशा है जो कभी भी उतरता नहीं है। केवल प्रभु की कृपा से ही भक्ति प्राप्त होती है। जब दुःख आता है तो उसे ईश्वर की दया समझो। जब सुख आता है तो उसे ईश्वर की कृपा समझो। दोनों परिस्थितियों में सदा प्रसन्न रहो। यदि व्यक्ति संपत्ति और विपत्ति दोनों में प्रसन्न रह पाता है तो वह प्रभु की कृपा होती है। मानव का जीवन पूर्णतया ईश्वर के आश्रित होना चाहिए। गरीबी–अमीरी तो बाद की बात है, पहले मनुष्य को ऐसी संपत्ति अर्जित करनी चाहिए जो उसे अन्दर से मनुष्य बनाती है। मैंने सोचा कि आज मनुष्य स्वार्थ में इतना अंधा हो गया है कि उसको दूसरे का दुःख भी द्रवित नहीं कर पाता। आज व्यक्ति को भगवान की भक्ति के लिए बड़ी मुश्किल से समय निकालना पड़ता है।

उन्होंने कहा कि आज रिखिया के बच्चों को भक्ति का भरपेट भोजन मिल रहा है। यज्ञशाला में नाचते कूदते बच्चे श्री स्वामी ती के कथन की सहज ही पुष्टि कर रहे थे। उन बच्चों के भाग्य को देखकर सहज ही रश्क हो रहा था। श्री स्वामी जी ने कहा कि भगवान कई तरह से प्रगट होते हैं। उनको प्रगट होने के लिए एक माध्यम की आवश्यकता होती है। गुरु एक माध्यम है, भगवान की मूर्ति एक माध्यम है, ऐसा अनेक शास्त्रों में वर्णन है। कन्या भगवान का एक सशक्त माध्यम हो सकती है अगर वह चाहे तो।

बार–बार अपने सत्संगों में श्री स्वामी जी ने कन्या के महत्व पर बल दिया है। कितने दुर्भाग्य की बात है कि आज शिशु कन्याओं की गर्भ में ही हत्या कर दी जाती है। जिस घर में ज्यादा कन्याएँ होती हैं, वहाँ कन्या को हेय समझते हुए ठीक से खाना–पीना भी नहीं दिया जाता। नवरात्रि में कन्या भोज क्या कन्या के महत्व का प्रतीक नहीं है ? परन्तु आज वह साल में केवल दो बार तक ही सीमित रह गया है।

"जो तुम दूसरों को देते हो वही तुम्हें वापस मिलता है"

''तुम प्यार दोगे तो प्यार मिलेगा। तुम घृणा दोगे तो घृणा मिलेगी''। सन् 2008 के शतचण्डी यज्ञ में हम सब भक्तों को स्वामी जी के सत्संग का सौभाग्य पाँचों दिन प्राप्त हुआ। ज्ञान के हीरे मैंने अपनी झोली में एकत्र किए और जब उनको हृदयंगम करते हुए व्यावहारित किया तो उनके कथन मेरे जीवन में अक्षरक्षः सत्य घटित हुए। परमगुरु स्वामी शिवानन्द की असीम अनुकम्पा से उनके ज्ञानयज्ञ में एक बूँद बनने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। गुरु कृपा से मैं इस साहित्य को दोनों हाथों से लुटा रही हूँ जन साधारण में।

ये पुस्तकें बाँटने के फलस्वरूप कई व्यक्ति लाभान्वित हो रहे हैं और उनका जीवन भी बदल रहा है; ऐसा मुझे अनेक व्यक्तियों ने बताया। उन्हीं व्यक्तियों में से कोई–कोई मुझे पुस्तकें भी भेंटस्वरूप प्रदान कर रहा है। स्वामी चिदानन्द की अनेक पुस्तकें इसी प्रकार मुझ तक पहुँची जिनको पढ़कर मैं कृतार्थ हो रही हूँ। और न केवल कृतार्थ हो रही हूँ अपितु उनकी शिक्षाओं को, आत्मसात करते हुए उनका

प्रयोग अपने लेखन में भी सतत कर रही हूँ।

जब भी मुझे कोई पुस्तक उपहार स्वरूप मिलती है, मुझे स्वामी जी की इस शिक्षा का स्मरण होता हैं और मैं उनके श्री चरणों में नतमस्तक हो जाती हूँ। सन् 2009 मई में जब मैं शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश गई तो वहाँ से भी मुझे अनेक पुस्तकें स्वामी पद्मनाभानन्द ने दी। यह लेख लिखने का उद्देश्य है कि हम विचार करें कि हमें जो मिल रहा है वह हमारे पूर्वकर्मों की ही प्रतिकृति है।

यही सोचते हुए अपना वर्तमान सुधारें ताकि हमारा भविष्य उज्ज्वल बने। कर्म का सिद्धांत अटल है। हम जैसा करेंगे उसका फल हमको कभी न कभी तो भोगना ही पड़ेगा।

गुरु पूर्णिमा संदेश

गुरु पूर्णिमा हिन्दुओं का एक महत्वपूर्ण पर्व है। इस दिन गुरु अपने सब शिष्यों का हृदय छूता है। तैयार रहो ! गुरु का आशीर्वाद ग्रहण करने के लिए अपने हृदय और मन के द्वार खोल दो।

जीवन में दो तरह की परिस्थितियाँ आती हैं। मन के मुताबिक या मन के विरूद्ध। तामसिक व्यक्ति सदा अच्छी परिस्थिति चाहता है। राजसी हमेशा बुरी को अच्छी में बदलना चाहता है। परन्तु सतोगुणी दोनों में अपना सन्तुलन बनाए रखता है। हम सब को सदा खुशी चाहिए। परन्तु हमारी इच्छा के अनुरूप परिस्थितियाँ नहीं बदलतीं। जीवन में अनेक अनचाहे परिवर्तन होते हैं। जब लोग हम से खुश होते हैं, हमें बहुत अच्छा लगता है। जैसे ही कठिनाइयों या निन्दा से हमारा सामना होता है, हम घबरा जाते हैं; अपना सन्तुलन खो बैठते हैं। कठिनाइयाँ हमारा मनोबल बढ़ाती हैं; हमारी मानसिक शक्ति, सन्तुलन और स्थिरता को बढ़ाती है। अतः कठिनाइयों से मत डरो ! उनका डट कर सामना करो ! जब लोग हमारी निन्दा करें या हम पर दोषारोपण करें; तो हम उनका धन्यवाद करें। उन पर क्रोध करने की अपेक्षा उन पर दया करें। प्रारम्भ में यह कठिन अवश्य है; परन्तु अभ्यास से असम्भव को भी संभव बनाया जा सकता है। केवल कमजोर व्यक्ति ही क्रोध का सहारा लेता है। वीर वही है, जो अपमान का न केवल सामना करे, अपितु उस व्यक्ति को दुआ भी दे। यदि हम छोटे–छोटे अपमान से डर जाते हैं, निन्दा सहन नहीं कर पाते, तो लोभ, अहंकार, क्रोध, आसक्ति और इच्छा का त्याग कैसे करेंगे ?

जीवन के हर कदम पर आन्तरिक शांति बनाए रखना सीखो। पूरा विश्व तुम्हें गाली देता रहे, परन्तु तुम अपना आन्तरिक सन्तुलन बनाए रखो। याद रखो जीवन में परिस्थितियाँ हमारी इच्छा के अनुरूप नहीं बदलेगी। जीवन में तूफानों का सामना साहस और धैर्य से करो।

आज ही दृढ़ निश्चय करो –

हे प्रभु ! मुझे मुसीबतों और कठिनाइयों का हार पहनाओ। मेरे अहंकार पर गाली और निन्दा का चाबुक लगाओ। ताकि मैं कठिनाई का सामना साहस के साथ कर सकूँ। मुझे इतनी शक्ति दो कि मैं हर परिस्थिति में अपना मानसिक संतुलन बनाए रख सकूँ, सदा !

और यदि तुम्हें अभी भी इच्छा है सुख की, प्यार की, प्रशंसा की, तो यह साधना पथ छोड़ दो। अपने जीवन के लिए एक दृढ़ संकल्प लो।

पंचम खण्ड – मैं और मेरे गुरु

मैं और गुरु ?

मैं एक गुरु की शरण ग्रहण करूँगी, ऐसा मैंने कभी स्वप्न में सोचा नहीं था।
मैं किसी व्यक्ति के चरणों में यह मस्तक झुकाऊँगी, ऐसा मैंने कभी स्वप्न में भी सोचा नहीं था।
नहीं था विश्वास मुझे गुरु और उनके चेलों में, ऐसा लगता था कि पता नहीं क्या धोखा वहाँ हो।
अखबारों की सनसनीखेज खबरें पढ़ती और टी०वी० पर अनेक षड़यन्त्रों का पर्दाफाश होते देखती तो अंदर तक काँप जाती।
सोचती, कैसे हैं ये नकाबपोश जो धर्म की आड़ में लोगों को ठगते हैं ?
क्या नहीं जानते ये कि वह ईश्वर हजारों आँखों से इनकी काली करतूत देख रहा है ? ऐसा सोचकर अंदर तक सहम जाती।
जब गुरु आए मेरे जीवन में अपरोक्ष रूप में, तो छेड़ा उन्होंने संगीत मेरे हृदय के तारों में। जब गुरु आए मेरे जीवन में अपरोक्ष रुप में, तो दिखाए उन्होंने चमत्कार मुझे अपनी शिक्षाओं के सच्चे अनुभवों के रूप में।
कहीं कोई अपेक्षा नहीं ! कहीं कोई छलावा नहीं। कहीं कोई दिखावा नहीं।
मोहित कर लिया उन्होंने मेरी आत्मा को एक अनिवर्चनीय सुख की वर्षा करके। बाँध लिया उन्होंने मुझे अपने श्री चरणों से, अपनी करुणा का रस अविरल बहा कर।
डूबने उतरने लगी मैं उनकी कृपा के सागर में अनचाहे ही अनजाने में ही।
ढूँढने लगी अंत उस सागर का, परंतु नहीं पाया कोई ओर अथवा छोर उस अथाह जलराशि का।
कुछ मांगा नहीं, केवल मुझे दिया ही दिया अथाह विश्वास और श्रद्धा का उपहार सतत।
जब ऐसे अनुभव हुए एकत्र मेरी झोली में एक नहीं अनेक तो हुई मैं नतमस्तक उनके श्री चरणों में अन्तर्तम से।
जान गई कि हैं वे एक ऐसे सद्गुरु जो हम निम्न आत्माओं के कल्याण के लिए ही इस धरा पर आए हैं। थे वे एक तारा आकाश के जो हैं असीम, अनन्त। हैं वे एक ज्योति इस धरा की जो अक्षय है।
अपनी उस ज्योति की आभा से उन्होंने चमकाया है करोड़ों को, सिखाया जुड़ना अपने निजस्वरूप से।
कोई स्वार्थ नहीं ! कोई आसक्ति नहीं ! कोई मोह नहीं ! किया त्याग उन्होंने इस नश्वर देह का इच्छा मृत्यु से, समाधि से।
यह थी उनकी गहन अनुकम्पा जिसने मुझे जोड़ा उनके श्री चरणों से; वरना मैं रह जाती अधूरी, अतृप्त वंचित इस बहुमूल्य आत्मधन से।
चाहती हूँ आज कि प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर छिपे इस आत्मधन को जाने और वह

सुख प्राप्त करे जिस पर उसका जन्मसिद्ध अधिकार है।
जाने प्रत्येक व्यक्ति की वह उस परमपिता का अंश है और वह दिव्य आत्मा है। नहीं है दुःख और रोग उसका भाग्य क्योंकि ईश्वर ने उसको सुख और आनन्द के लिए ही गढ़ा है। इसी भावना से प्रेरित होकर अपने अनुभव कलमबद्ध करती हूँ और जन–जन में बाँटती हूँ।

कौन हूँ मैं ? कौन हूँ मैं ?

कौन हूँ मैं ? कौन हूँ मैं ? मेरा 'मैं'मुझी से पूछता है सतत निरन्तर यह सवाल।
क्या यही मैं देह जिसका अन्त निश्चित ? क्या यही मैं श्वास जिसके अंक निश्चित ?
अन्दर से आवाज आती है,"नहीं–नहीं तुम यह देह नहीं हो केवल। तुम तो हो असीमित अनन्त।''
अन्दर से आवाज आती है ''तुम नहीं हो केवल मन,बुद्धि,चित्त और अहंकार। तुम तो हो ज्योति स्वरूप, प्रकाश स्वरूप।''
गुरु कहते हैं '' यहाँ संसार में कुछ भी नहीं है। तुम्हारा कुछ भी नहीं है।'' कैसे करूँ विश्वास उनका ? मुझे तो यह संसार सच भासता है।
कैसे करूँ विश्वास उनका ? मुझे तो सब संबंध अपने से लगते हैं।
कैसे करूँ विश्वास उनका ? मुझे तो अपने पास जो भी वस्तुएँ हैं वे सब अपनी लगती हैं।
शास्त्र कहते हैं, ''ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या।'' कैसे करूँ विश्वास शास्त्रों का ? मुझे तो सब सत्य लगता है।
इसी ऊहापोह में यह जीवन अब बीतता है। छूटता जाता है यह समय हाथ से रेत की भाँति और केवल सुख दुःख के अनुभव ही बचते हैं।
मैं पूछती हूँ स्वंय से, ''मैं क्यों इस धरा पर आई ? ''गुरु कहते हैं, '' तुम्हारी है एक अनोखी भगवत किस्मत,जिसके लिए तुम्हें इस धरा पर भेजा गया है।''
उनके कथन का विश्वास करती हूँ और स्वयं को सतत परहित के कार्यों के लिए प्रेरित करती हूँ।
करते–करते परहित अपने अन्दर के ईश्वर से जुडती हूँ और असीम आनन्द प्राप्त करती हूँ। इस आनन्द को प्रत्येक व्यक्ति प्राप्त करे, इसी भावना से प्रेरित होकर अपने अनुभव कलमबद्ध करती हूँ।
मिल रहा है आशीर्वाद गुरु का असीम और अनन्त, उनकी कृपा से अब दिन–रात तृप्त रहती हूँ। जान रही हूँ अब ''मैं''को अपनी थोड़ा–थोड़ा और अन्वेषण की इस राह पर कदम बढ़ाती हूँ।
जानती हूँ ,है यह यात्रा अनन्त, परन्तु गुरुकृपा के सम्बल से अब अनजानी राह पर भी निःशंक सफर करती हूँ।

मैने पाया साया एक सद्गुरु का

अध्यात्म की शरण में आकर मैने पाया साया एक सद्गुरु का।
एक सद्गुरु जो थे एक हद तक साधारण अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के आश्रम में।
एक सद्गुरु जो स्वीकार करते थे अपने अवगुणों को बेझिझक, बेधड़क।

जब उनसे किसी ने पूछा, ''क्या आपको गुस्सा आता था ?'' तो उन्होंने कहा ''अरे मत पूछो,अपने गुरु के आश्रम में हमने अनेक संन्यासियों को पीटा। दूर–दूर तक हमारा आतंक छाया रहता था। ''जब उनसे किसी ने पूछा, आपके अपने गुरु के साथ कैसे संबंध थे ?''
तो उन्होंने कहा, ''अरे मत पूछो,हमारा अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के साथ छत्तीस का आँकड़ा था। हमारे गुरु जी तो थे एक सीधी गाय और हम अलसेशियन कुत्ते।
एक बार हमने गुरु जी की आज्ञा का न केवल उल्लंघन किया अपितु चाबी का गुच्छा भी उनके पैरों पर फेंक दिया गुस्से में और तीन दिन तक अपना कमरा बंद करके पड़े रहे।''
उनके ऐसे–ऐसे कथन पढ़कर हुई मैं हँसते–हँसते बेहाल और जाग उठी आशा नूतन हृदय में।
यदि स्वामी सत्यानन्द इतनी कमजोरियों और नादानियों के बावजूद भी ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, तो मैं क्यों नहीं प्राप्त कर सकती।
अन्दर कहीं गहरे तक मैं उनके और उनकी बेझिझक स्वीकृति के प्रति समर्पित हुई स्वतः ही।
कहीं कोई दुराव नहीं। कहीं कोई छिपाव नहीं।
अपना झूठा प्रभाव जमाने का कोई प्रयास नहीं।
वे एक अनूठे सन्त थे जिन्होंने मुझे मेरे अपराध बोध से मुक्त होने का मार्ग दिखाया।
क्रोध का दानव आज मुझे बहुत कम परेशान करता है परन्तु अब उसके आने से, मैं अपराध बोध से ग्रस्त नहीं होती।
अपितु हर बार एक दृढ़ निश्चय लेती हूँ उसके निराकरण का और धीरे–धीरे अपने स्व से जुड़ने की कला सीखती हूँ।
उन्होंने कहा, ''तुम गिरो चाहे हजार बार; परन्तु फिर उठो और चलो। असफलताओं से मत घबराओ।''
हर असफलता के समय, उनकी इस शिक्षा को जीवन में अपनाती हूँ और उस असफलता से सीखते हुए अपना आत्म बल बढ़ाती हूँ।
जाग्रत करती हूँ अपनी इच्छाशक्ति और अध्यात्म के इस कठिन पथ पर चलती हूँ और सफलता प्राप्त करती हूँ।
बार –बार मनन चिन्तन करती हूँ '' क्या यह उस दिव्य सन्त की कृपा नहीं ?''
प्राप्त करती हूँ असीम सुखि, शान्ति और प्रसन्नता, इस मार्ग पर चलते –चलते और अपने साथ साथ अनेक व्यक्तियों के जीवन आलोकित करती हूँ अपने लेखों के माध्यम से। होती हूँ नतमस्तक उनके श्री चरणों मे बारम्बार अपने सच्चे अनुभवों से न कि किसी अंधविश्वास से।
झुकता है सिर मेरा अन्दर से, न कि बाहर के दिखावे से, अथवा डर से।

मेरी एक प्रार्थना अपने गुरु के श्री चरणों में

हे गुरुदेव, कब निकलूँगी मैं इस राग और द्वेष के बंधन से ?
हे गुरुदेव कब हो पाऊंगी मुक्त इस मोह और आसक्ति के मायाजाल से ?
हे गुरुदेव कब देख पाऊँगी उस प्रकाश को सतत जो उस सर्वनियंता का रूप है हर

जीव के अन्दर ?
हे गुरुदेव कब देख पाऊँगी हर जड़ चेतन को तुम्हारा ही एक रूप, उस सर्वनियंता का ही प्रतिरूप ?
ऐसे सवाल बार –बार मेरे जहन में कौंधते हैं और अकसर बेचैन मुझे कर देते हैं।
जान चुकी हूँ अब अनुभव से अपने कि आत्म ज्ञान संभव है।
आपकी कृपा से ईश्वर कृपा से जान चुकी हूँ अब अनुभव से अपने कि हर जीव को प्यार करने से एक अद्वितीय सुख मिलता है।
जान चुकी हूँ अब अनुभव से अपने कि जो कुछ भी मेरे पास है उसको दूसरों के साथ बाँटने से एक अनुपम शान्ति मिलती है।
जान चुकी हूँ अब अनुभव से अपने की अपरिग्रह से प्रभु कृपा अपार असीम मिलती है।
फिर भी क्यों बार–बार मैं संचय के लिए, संग्रह के लिए उद्यत होती हूँ ?
क्यों समझती हूँ किसी को अच्छा और किसी को बुरा ?
क्यों करना चाहती हूँ किसी से प्रेम और किसी से घृणा ?
समझ पाती हूँ शिक्षाओं से तुम्हारी कि यही राग और द्वेष है।
समझ पाती हूँ शिक्षाओं से तुम्हारी कि यही भाव मेरी आध्यात्मिक प्रगति की राह में बाधक है।
करती हूँ प्रार्थना, इस लिए अब तुमसे ''दो मुझे वह ज्ञान जो इस दुष्चक्र से मुझे निकाल ले।''
करती हूँ प्रार्थना, इसलिए अब उस परमपिता से ''दो मुझे वह भक्ति जो मुझे समष्टि में स्थिर करे।''
आती है इच्छाएँ बार–बार व्यथित मुझे कर जाती हैं, परन्तु अब तुम्हारी कृपा से उनकी निरर्थकता को सहज ही समझ पाती हूँ।
है प्रार्थना, मेरी अब तुमसे ''पकड लो हाथ मेरा और संसार के इस भँवर से निकाल लो।
तुम तो हो सर्वसमर्थ और मैं हूँ एक दम निर्बल, तुम तो हो ईश्वर मेरे और मैं हूँ तुम्हारी शरणागत।

मेरे जीवन में आए, एक सद्गुरु

अध्यात्म की इस राह पर कदम रखते ही मेरे जीवन में आए एक सद्गुरु। एक ऐसे सद्गुरु जो ब्रह्मज्ञानी हैं। और फिर भी अभिमान से कोसों दूर हैं।
उन्होंने थामा मेरा हाथ, संसार के इस बीहड़ में और सिखाई मुझे कला, सम रहने की अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों में।
सिखाया मुझे दया करना अपने व्यवहार से न कि अपने कथन से।
दिया मुझे अमोघ अस्त्र 'सेवा प्यार और दान' का मेरा व्यक्तित्व निखारने के लिए ।
किया मेरा मार्ग दर्शन हर पल, हर क्षण।
जब –जब मैं लड़खड़ाने लगी इस राह पर।
की मेरी रक्षा जब मतलबी और चालाक व्यक्तियों ने मुझे प्रताड़ित किया।
और न केवल रक्षा की अपितु आश्रय दिया अपनी स्नेहमयी, करुणामयी गोद में।

पाकर उनका आश्रय, पाकर उनका सम्बल खिल उठी मेरे मन की कली।
हुआ सुवासित मेरा जीवन असमय के फूलों से और गुरु की असीम अनुकम्पा से, मैं यह सुगन्ध औरों तक फैला पाई।
फैला कर इस सुगंध को अनगिनत आत्माओं तक, प्राप्त कर रही, मैं आशीर्वाद गुरु और उन आत्माओं का निरन्तर।
हुआ मेरा जीवन सार्थक क्योंकि किसी और के मैं काम आ सकी और इस मानव देह को सुकारथ कर सकी।
करती हूँ अब धन्यवाद सतत अपने गुरु का जिन्होंने एक धूल के कण को हीरा बना दिया।
रहना चाहती हूँ अब मानसिक रूप से सतत उनके श्री चरणों में।
जीवन उत्थान के लिए, गुरु मेरा मार्गदर्शन कर रहे हैं और अपने व्यवहार से मुझे यह सेवा करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

जाग उठी मेरी आत्मशक्ति गुरु कृपा से

जाग उठी मेरी आत्मशक्ति स्वामी सत्यानन्द की शिक्षाएँ पढ़–पढ़ कर।
जाग उठी मेरी सोई हुई जिज्ञासा स्वामी सत्यानन्द की शिक्षाएँ पढ़–पढ़ कर ।
उन्होंने कहा, ''तुम एक आत्मा हो।
वह आत्मा जिस रोज जाग जाएगी, पर्वतों को हिला देगी।
इस धरा पर असंभव कार्य भी कर दिखाएगी।
उनके इस कथन को पढ़कर मैं हो उठी प्रेरित और किया मैने एक प्रयास अपनी आत्मा को जगाने का योग के मार्ग का अनुसरण करके।
उन्होंने लिखा'' जब इच्छा शक्ति जाग्रत हो जाती है तो तीन+तीन =सात भी हो सकता है।''
करती हूँ विश्वास उनके कथन का और अपनी इच्छा शक्ति जाग्रत करने का प्रयास करती हूँ इस मन को संयमित करके।
करती हूँ अभ्यास योग के नियमित रूप से सतत, अनवरत और असफलताओं के बावजूद हतोत्साहित नहीं होती हूँ।
गिरती हूँ , उठती हूँ पर हिम्मत नहीं हारती हूँ प्राप्त करती हूँ सम्बल स्वामी सत्संगी और स्वामी निरजंन के मार्ग दर्शन का और अपनी आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त करते करते अनेक हीरे–मोती अपनी झोली में एकत्र करती हूँ।
करती हूँ प्रयास वृहद असफलताओं और बाधाओं के बावजूद भी सतत अनवरत ।
नहीं डरती किसी व्यक्ति से आज मैं अपने गुरु की कृपा से।
करती हूँ सामना बहादुरी से हर छल कपट और झूठ का और अपने मार्ग पर निःशंक सफर करती हूँ।
सोचती हूँ मनन चिन्तन करती हूँ क्या यही आत्म शक्ति नहीं ?
करती हूँ सामना अपमान का बहादुरी से और उसको न केवल अब सहती हूँ अपितु अपमान करने वाले व्यक्ति को दुआ भी सहज ही दे देती हूँ।
करती हूँ प्रार्थना ऐसे व्यक्ति के लिए ईश्वर से,''हे प्रभु इसको क्षमा करना, क्योंकि यह जानता नहीं, कि यह क्या कर रहा है । इसको ज्ञान का उपहार देना।''

प्राप्त करती हूँ कृपा प्रभु की बहुतायत में परमार्थ की इस राह पर चलते–चलते।
प्राप्त करती हूँ सफलता विपरीत परिस्थितियों में भी और मिलती है मदद अनजानों से अनकहे ही।
भर जाती हूँ अपरिमित प्रसन्नता से ऐसे चमत्कार देखकर और इसे गुरुकृपा का रूप ही समझती हूँ।

मेरे गुरु मेरे रक्षक !

रहता है अहसास मुझे अपने सदगुरु का सतत अब।
ऐसा लगता है कि उनका रक्षक हाथ है मेरे और मेरे परिवार के सिर पर।
खो जाती हूँ जब भी मैं संसार की भूल–भुलैया में और कर बैठती हूँ कोई गलत निर्णय।
वे आ जाते हैं किसी न किसी रूप में और रक्षा मेरी करते हैं ।
बचा लेते हैं मुझे गहरे गड्ढे में गिरने से और अपने हाथ का संबल प्रदान करते हैं।
हैं मेरे अपने अनुभव इतने सटीक कि और किसी प्रमाण की मुझे जरूरत नहीं।
करवा रहे हैं समर्पण, मेरे परिवार का धीरे–धीरे अपने श्री चरणों में विभिन्न चमत्कारों के द्वारा।
घटित होती है उनकी शिक्षा ''यथा योग्य तथा कुरू'' मेरे जीवन में सत्य, जब मैं इच्छा का दमन करके सब कुछ उनके श्री चरणों में समर्पित कर पाती हूँ।
समझ पाती हूँ महत्व इच्छा के निराकरण का, स्वयं अपने ही अनुभव से, क्योंकि राग और द्वेष से सहज ही बच पाती हूँ।
और अपनी मानसिक शान्ति से खुद ही हैरान हो जाती हूँ। बढता है विश्वास मेरा शनैः– शनैः उनके श्री चरणों में।
बढ़ती है श्रद्धा मेरी शनैः–शनैः अपरोक्ष कार्यान्वन में।
होती हूँ नतमस्तक अधिकाधिक उनके श्री चरणों में, इस श्रद्धा और विश्वास की अमूल्य पूँजी प्राप्त कर के।
नही चाहती अब माँगना कुछ प्रभु से, इस रहस्य को समझकर।
करती हूँ अनुभव एक गहन विश्रान्ति का अपने अंतर में ; क्योंकि वे मेरे रक्षक हैं।

परमहंस स्वामी सत्यानंद की इच्छा मृत्यु

लोग कहते हैं कि परमहंस स्वामी सत्यानंद को इच्छा मृत्यु का वरदान था।
पर मुझे तो ऐसा लगता है कि यह उनकी तपस्या का परिणाम था।
उन्होंने चुना समय अपनी इच्छा के अनुरूप अपने महाप्रयाण का।
किया गमन इस नश्वर देह से आसन में बैठ कर, प्राणायाम करते हुए।
कोई कष्ट नहीं ! कोई रोग नहीं ! कोई शोक नहीं ! कैसा था यह अद्‌भुत संयोग अथवा था कोई ईश्वर का चमत्कार !
किया चयन उन्होंने शुभ मुहूर्त का अपने तप के बल पर; वह बल जो उन्होंने गुरु कृपा से अर्जित किया था।
किया पालन अपने गुरु की शिक्षाओं का उन्होंने सतत अपने व्यवहार से।
थी उनकी गुरुभक्ति इतनी दृढ़ कि अपनी इच्छा को भी किया पूर्णतया न्यौछावर

गुरु के श्री चरणों में।
कौन है ऐसा शिष्य आज कलियुग में जो गुरु आज्ञा पर अपना जीवन वार सके ?
कहाँ है ऐसा समर्पण शिष्यों में जो अपने गुरु की मृत्यु के पश्चात् भी उनकी आज्ञा का व्यावहारिकरण करें ?
तभी तो वंचित है आज शिष्य गुरु की कृपा और असीम अनुकम्पा से।
गुरु कृपा प्राप्त करने की होगी पात्रता जिस शिष्य के पास, गुरु तो स्वयं ही ऐसे शिष्य के पास दौड़े चले आएँगे।
आज आवश्यकता है हर एक शिष्य को समर्पण की, दृढ़ विश्वास और श्रद्धा की।
यही हम सीखें परमहंस स्वामी सत्यानंद के जीवन से और करें अर्जित धन तपस्या का, आत्मबल का।
हो जीवन हमारा उज्ज्वल और धवल और अनेक व्यक्तियों को हम प्रेरित कर सकें।
हो जीवन हमारा सार्थक इस धरा पर और अपने कर्मों की लेखनी से अपना भाग्य रच सकें।
अर्जित करें वरदान इच्छा मृत्यु का, अखण्ड स्वास्थ्य का संयम की लगाम से।
हो निर्वाण हमारा भी परमहंस स्वामी सत्यानंद की ही भाँति।
हो पूजन हमारा दिलों में करोड़ों व्यक्तियों के स्नेह और प्यार की दौलत से।
पाएँ विजय हम अपनी निम्नवृत्तियों पर और उगाएँ फसल सदाचार की, सद्व्यवहार की।
मिलें अपने परमपिता से गर्व से, अधिकार से, मृत्यु के पश्चात् और मनाएँ उत्सव अपनी मृत्यु का भजन, कीर्तन और अनेक पूजाओं के रूप में, जो करे कल्याण जन–जन का मृत्यु के बाद भी।

हे गुरुदेव ! कौन हो तुम इन्सान या भगवान ?

हे गुरुदेव ! मैं आज निश्चिन्त हूँ। क्यों ? क्योंकि मैं जानती हूँ कि तुम सर्व समर्थ हो, यदि मैं असमर्थ हूँ तो क्या ?
संभाल लोगे तुम मुझे जब–जब मैं डूबने लगूँगी इस संसार के भव कूप में।
दोगे सहारा तुम मुझे पल–पल, जब दुनिया वाले छल कपट करके मुझे गिराना चाहेंगे।
सौंपी है बागडोर मैने अपनी जीवन नैया की तुम्हारे सशक्त हाथों मे, फिर अब डर कैसा ?
जैसे–जैसे परमार्थ की इस राह पर चलती हूँ, वैसे–वैसे अधिकाधिक तुम्हारी कृपा के चमत्कार देखती हूँ।
कर देती है असम्भव को सम्भव तुम्हारी कृपा और भर देती है झोली मेरी बेमौसम के फूलों से।
महकती हूँ मैं उन फूलों से अन्तर्तम तक और अनेकों का जीवन सुवासित करने के लायक बनती हूँ।
दिखा दी वह अनोखी राह मुझे, जिस पर पल–पल मैं तुम्हारी उपस्थिति का अनुभव करती हूँ।
प्राप्त करती हूँ अनेकों के आशीर्वाद तुम्हारे साथ–साथ और खुशियों से अपना दामन

भरती हूँ।
तुम कब मिलोगे ? कब होंगे तुम्हारे दर्शन ? यही चिन्तन सतत करती हूँ। समझ पाती हूँ गोपियों की विरह वेदना को अपने ही अनुभव से।
और नित प्रतिदिन तुम्हारे श्री चरणों में और अधिक समर्पण करती हूँ।
क्या यही है तुम्हारी लीला ? कौन हो तुम इन्सान या भगवान ?
यह प्रश्न बार–बार मेरे जेहन में कौंधता है !

एक परमहंस की विदाई

दे हम विदाई परमहंस श्री स्वामी सत्यानंद को अपनी भावनाओं की।
भावनाएँ जो सतत उनके श्री चरणों में प्रवाहित होती हों।
भावनाएँ जो सतत उनके जीवन का ही चिन्तन करती हों।
मोड़ें हम अपने मन की दिशा उनकी शिक्षाओं के अनुरूप।
मोड़ें हम अपने जीवन की दिशा उनके जीवन का अनुसरण करते हुए।
क्यों ? क्योंकि वे एक महान आत्मा थे जो इस धरा पर ईश्वर की रूप थी, है और रहेगी।
क्यों याद करते हैं हम उन्हें दुःखी हृदय से ? याद करें हम उनको गौरव से, गर्व से।
बनाएँ हम अपना जीवन एक उत्सव गुरु आज्ञा पालन का।
बनाएँ हम अपना जवीन एक उत्सव बहुजन हिताय और बहुजन सुखाय का।
चलें उनके चरण चिन्हों पर और प्राप्त करें सम्पदाएँ आत्मज्ञान की अनन्त सुख, शांति और प्रसन्नता के रूप में।
करें विश्वास उन पर, उनकी शिक्षाओं पर और अपनाएँ उन शिक्षाओं को अपने व्यवहार में।
तभी होगा हमारा जीवन सफल। तभी होगा हमारा जीवन सार्थक।
बनें हम योग्य शिक्षक उनके और जग में करें प्रचार विश्वबन्धुता का, विश्वशांति का।
फैलाएँ उनके गुरु श्री स्वामी शिवानन्द की शिक्षाओं को अपने व्यवहार से न कि अपने कथन से।
करें उद्धार अपना उनके वाक्यों को प्रभु वाक्य समझते हुए और अनेक लोगों के उद्धार का मार्ग प्रशस्त करें।
अनुभव करें उस परमेश्वर का इसी धरा पर, इसी देह में बने अधिकारी गुरुकृपा के और समेटें अपनी झोली में असीम अनुकम्पा उनकी।
यही है लक्ष्य हर मानव का। प्राप्त करें हम अनन्त सुख, शान्ति और आनन्द और पृथ्वी का कोना–कोना आलोकित करें।
अनुभव करें, विश्वास करें कि परमहंस जी आज भी इसी धरा पर हैं हमारे कल्याण के लिए, हमारे मार्गदर्शन के लिए।
होगा हमारा जीवन तब एक उत्सव जिसमें आँसुओं का न स्थान होगा।
हम बनेंगे एक मशाल और हर अन्धेरे मानस को आलोकित करेंगे।
उनकी शिक्षाएँ जीवन में अपनाइए और अपने अनुभव से मेरे कथन की सत्यता को परखिए।

एक परमहंस का निर्वाण

एक परमहंस का निर्वाण होता है भिन्न एक साधारण मानव के निर्वाण से।
परमहंस जीता है दूसरों के लिए और छोड़ जाता है अपनी विरासत अनेक श्रद्धालु शिष्यों के रूप में।
ये शिष्य करते हैं पालन गुरु की शिक्षाओं का, गुरु के आदर्शों का।
फैलाते हैं सुगन्ध अपने गुरु के सद्कार्यों की और जन–जन का मन आलोकित करते हैं।
न केवल मन आलोकित करते हैं अपितु उनके जीवन की दिशा ही बदल देते हैं।
करते हैं प्रेरित वे जन–जन को परमार्थ के लिए अपने व्यवहार से न कि अपने कथन से।
बनते हैं वे दूत ईश्वर का इस धरा पर और अनेक निराश्रितों का सहारा बनते हैं।
जीते हैं अपने गुरु के आदर्शों के लिए और मरते हैं अपने गुरु के कार्यों को करते हुए।
होता है परमहंस संन्यासी धन से निरत, परन्तु होती है दौलत उसके पास अध्यात्म की, ईश्वर कृपा की। होता है धनी वह निःस्वार्थ और निष्काम भाव का; क्योंकि वह सब जीवों में ईश्वर का रूप देख पाता है।
होता है उसका हृदय असीमित प्यार और स्नेह से परिपूर्ण ईश्वर की कृपा से।
बाँटता है वह इसी प्यार को समस्त मानवता में और कोई भेद–भाव करता नहीं है।
प्राप्त करता है वह प्यार और सम्मान सच्चा अनेक भक्तों से और उनके दिलों में सदा जीवित रहता है।
यही है सम्पदा असली जो भाग्यशाली है वही इस रहस्य को जान पाता है।

क्या सीखें हम परमहंस स्वामी सत्यानंद के निर्वाण से ?

हम सीखें परमहंस जी के निर्वाण से कि यह देह नश्वर है और एक दिन सबको ऊपर (भगवान के पास) जाना है।
हम सीखें और रोपित करें अपने मन के अन्दर इस जीवन की क्षणभंगुरता को, अनिश्चितता को।
न डूबें काम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, लोभ और अहंकार में क्योंकि वह सब यहीं रह जाएगा।
न उलझें हम माया के जाल में और जीएँ अपना जीवन प्रभु प्रदत्त निर्देशों के अनुरूप।
करें परमार्थ और भाग्य अपना उज्ज्वल बनाएँ और अपने कर्मों की लेखनी से अपने भाग्य की काली रेखाओं को मिटाएँ।
याद रखें गुरु के सरल वाक्यों को और उन्हें अपने जीवन में अपनाएँ।
करे एकत्र दौलत दुआओं की अपनी झोली में और पल–पल असीम सुख, शान्ति और प्रसन्नता प्राप्त करें।
ऐसा सुख जो सतत बहेगा हमारे अन्तर में और न निर्भर होगा बाह्य सुख साधनों पर।
ऐसी प्रसन्नता जो सतत रहेगी हमारे अन्तर में और करेगी प्रभावित अनेक जीवों को।
ऐसी शान्ति जो हमारे स्वभाव का अंग बनेगी और हमारा मार्ग प्रशस्त करेगी धैर्य और सन्तोष जैसे सद्गुण धारण करने के लिए।

बनेंगे हम भले और भला ही करेंगे क्योंकि तब हम प्रभु के बनेंगे।
दूसरों के दुःख को अपना दुःख समझेंगे और इसी धरा पर रामराज्य की संरचना करेंगे।
होगा प्रस्फुटित आत्मभाव जब हमारे अन्तर में तो ईश्वर हमारे चारों ओर ही मँडराएँगे।
एक उस परमपिता का अनुभव आने से हो जाएँगे हम मालामाल, निहाल।
पूजे जाएँगे अपनी मृत्यु के पश्चात् भी और अनेक दिलों पर राज्य करेंगे परमहंस जी की ही भाँति।
न इकट्ठी की उन्होंने दौलत दुनिया की तो क्या, प्रेम की दौलत उनकी अथाह सम्पत्ति थी, है और रहेगी।
तो आओ! हम अपना जीवन उज्ज्वल बनाएँ, अपने मन की दिशा स्वार्थ से परमार्थ की ओर मोड़े और इसी धरा पर मोक्ष का अनुभव करें।
कहाँ होगी फिर इच्छा मुक्ति की ? निर्वाण की ? लेना चाहेंगे जन्म हम भी परमहंस जी की ही तरह सेवा करने के लिए बार–बार इस धरा पर और अपनी आध्यात्मिक उन्नति का पथ प्रशस्त करते हुए, अनेक लोगों के मार्गदर्शक बनेंगे।
जीवन हो तो ऐसा हो और मृत्यु हो तो ऐसी हो, यही बनाएँ लक्ष्य अपने हृदय में।
कहाँ हम डूबें हैं भोग विलास में ? कहाँ हम डूबें हैं संसार में ?
कहाँ हम जूझते हैं दिन–रात धन कमाने और उस धन को बचाने के उपायों में।
याद रखें हर पल मृत्यु को और जुटाएँ साधन परमार्थ के और सुधारें अपना वर्तमान और भविष्य दोनों ही।
करें प्रार्थना ईश्वर से कि वह हमारे लिए एक सद्गुरु भेजे।
बनेंगे जब हम काबिल तो सद्गुरु स्वयं ही आ जाएँगे और पकड़ लेंगे हाथ हमारा।
यह कोई कोल कल्पित कहानी नहीं, यह सत्य अनुभव है।
एक प्रयोग करिए और अपने अनुभव से ही मेरे कथन की सत्यता को परखिए।

क्या सीखें हम परमहंस स्वामी सत्यानन्द के जीवन से ?

सीखें हम पाठ वैराग्य का परमहंस स्वामी सत्यानंद के जीवन से।
सीखें हम जीवन जीने की कला परमहंस जी के समर्पण से।
किया अपना जीवन उन्होंने समर्पित अपने गुरु श्री स्वामी शिवानन्द के चरणों में।
समझा स्वयं को सदा एक शिष्य और अपने गुरु के वाक्यों का ही जीवन पर्यन्त अनुसरण किया।
न स्वयं का कोई व्यक्तित्व, न स्वयं का कोई उद्देश्य।
जीवन हो तो ऐसा हो जो पूर्णतया दूसरों के लिए ही समर्पित हो।
जीवन हो तो ऐसा हो जो कि किसी के काम आए और दे उसे आशा की किरण निराशा के डूबते भँवर में।
जीवन हो तो ऐसा हो जो बने सहारा किसी बेसहारे का और उसे समर्थ बनाए।
जीवन हो तो ऐसा हो जो बने प्रकाश किसी के जीवन के अन्धेरे में।

जीवन हो तो ऐसा हो जो जले विश्व में मशाल बनकर और पल–पल अपनी ज्योति जन–जन तक पहुँचाए।
जीवन हो तो ऐसा हो जो धर्मनिरपेक्षता का जीता जागता उदाहरण हो और दे सम्मान सब धर्मों को समान रूप से।
जीवन हो तो ऐसा हो जो हर मानव को एक दृष्टि से देखे और उसको ईश्वर का प्रतिरूप समझे।
जीवन हो तो ऐसा हो जो ईश्वर की ही भाँति उदार और विशाल हो।
जीवन हो तो ऐसा हो जो दे सबको शरण और शरणागत वत्सल बने।
जीवन हो तो ऐसा हो जो बने एक मिसाल करोड़ों के लिए अपने व्यवहार से, न कि अपने कथन से।
जीवन हो तो ऐसा हो जो हर किसी के अन्दर झाँक सके और उसका निहित गुण पहचान सके।
जीवन हो तो ऐसा हो जो हर मानव को उसके अंदर के गुण, दोषों से जोड़ सके।
जीवन हो तो ऐसा हो जो हर मानव को उसके अंदर के स्वरूप का दर्शन करा सके।
जोड़ सके उसको सम्पूर्ण मानवता से और विश्व बन्धुत्व का सपना सच कर दिखाए।
था ऐसा ही एक प्रयास उनका क्योंकि उन्होंने गरीबों और पिछड़े वर्गों के बालकों, बालिकाओं और वृद्धों के उत्थान का बीड़ा उठाया।
डाला बीज संस्कार का इस नई पौध में और विश्व की उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया।
धन्य हैं ऐसे गुरु जो मृत्यु के पश्चात् अनेक भक्तों के द्वारा पूजित हैं यद्यपि वे एक फक्कड़ संन्यासी थे जो अध्यात्म की दौलत के धनी थे।
ऐसे गुरु के चरणों में, मैं नतमस्तक हूँ।

मेरे गुरु की असीम अनुकम्पा

करती हूँ प्रार्थना देवी माँ से, ''हे माँ मुझे दो आन्तरिक शक्ति ताकि मैं गुरु प्रदत्त इस सेवा को पूर्ण मनोयोग से कर सकूँ।"
पूर्ण मनोयोग से कर सकूँ और अपने गुरु की शिक्षाओं को जन–जन तक पहुँचा सकूँ।
क्यों ? तप्त है आज मानव स्वनिर्मित दुःखों से।
पराधीन है आज मानव स्वनिर्मित बंधनों से, बंधन जो कुछ रूढ़िवादियों ने उस पर लादे हैं। बंधन जो स्वयं उसने अपने ऊपर ओढ़े हैं।
हैं गुरु मेरे ब्रह्मज्ञानी, जो आज भी जीवित हैं अपने शिष्यों के दिलों में, अपने शिष्यों के कृत्यों में।
थे मेरे गुरु मूर्ति सेवा की, उनकी यही छवि हृदय में रखते हुए, मैं प्रतिदिन स्वयं को सेवा में समर्पित करती हूँ।
सेवा के असीम अनन्त परिणाम अपने अन्तर में गुरु कृपा के रूप में अनुभव करती हूँ।

मिल रही है सफलता मुझे दुर्गम बीहड़ वनों में भी ! क्यों और कैसे ?
समझती हूँ मैं इसे अपने गुरु की कृपा, असीम अनुकम्पा का एक रूप।
मिलता है स्नेह मुझे अनजानों का, समझती हूँ इसे मैं अपने गुरु की कृपा, असीम अनुकम्पा का एक रूप ।
मिल रही हैं मुझे दुआएँ अनेक अनजानों की, समझती हूँ इसे मैं अपने गुरु की असीम अनुकम्पा का एक रूप।
करती हूँ अनुभव असीम सुख, शान्ति और प्रसन्नता अपने अंतर में, समझती हूँ इसे मैं अपने गुरु की असीम अनुकम्पा का एक रूप।
इन्हीं अनुभवों से प्रेरित हो कर, परमार्थ के इस मार्ग को अपने जीवन का ध्येय बनाती हूँ और अब सतत निष्काम भाव से सेवा ही करना चाहती हूँ।

मेरे सद्गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद जीवित हैं आज भी !

मेरे सद्गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद जीवित हैं आज तस्वीर में।
मेरे सद्गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद जीवित हैं आज अपने भक्तों के दिलों में।
मेरे सद्गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद जीवित हैं आज अपनी अनेक शिक्षाओं में।
मेरे सद्गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद जीवित हैं आज अपनी अनेक पुस्तकों में।
मेरे सद्गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद जीवित हैं आज अपनी अनेक कृतियों में।
कृतियां जो हैं विश्व के प्रथम योग विश्वविद्यालय के रूप में।
कृतियां जो हैं 'योग रिसर्च फाउंडेशन' के रूप में।
कृतियां जो हैं 'योग पब्लिकेशन ट्रस्ट' के रूप में।
हैं उनके शिष्य परमहंस स्वामी निरंजनानंद सरस्वती जो सब शिष्यों के दिलों पर राज्य करते हैं अपने पद से नहीं, अपनी उपाधि से नहीं, अपितु अपनी करुणा, सौम्यता और हृदय की विशालता से।
हैं उनकी शिष्या रिखिया पीठाधीश्वरी स्वामी सत्यसंगानंदा जो सबके दिल पर राज करती हैं अपनी उपाधि से नहीं, अपितु अपनी स्नेहमयी करुणा से जो उनके मातृभाव को दर्शाती है।
करें हम शिष्य कितनी भी गलतियाँ रिखिया जा कर, वह उदार हृदय से क्षमा करती हैं।
रखती हैं ख्याल हर जिज्ञासु की आध्यात्मिक प्रगति का और उसी के अनुकूल प्रत्येक व्यक्ति का मार्गदर्शन करती हैं।
रखती हैं लगाम अनुशासन की अपने सशक्त हाथों में और शिवानन्द मठ का बखूबी संचालन करती हैं।
अत्यधिक व्यस्त होते हुए भी विशेष अवसरों पर, हम भक्तों को पर्याप्त समय देती हैं।
करती हैं मार्गदर्शन हर शिष्य का, हर जिज्ञासु का, जो भी उनकी शरण में रिखिया जाता है।
मिलता है मार्गदर्शन पत्रों तथा फोन के माध्यम से भी; इतना कुछ वह कैसे कर लेती

हैं, कभी–कभी हैरान मैं हो जाती हूँ।
है मिश्रण उनके व्यक्तित्व में एक कुशल प्रशासक और एक स्नेहमयी माँ का, जो बरबस अनेक शिष्यों को उनकी ओर आकर्षित करता है।
हम शिष्य तो हैं एक रज कण उन दिव्यविभूतियों का फिर भी वृहद सम्मान पाते हैं इस जगत में यदि एक अंश भी उनके व्यक्तित्व का अपनाते हैं।
यही है उपहार मेरे सद्गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद का विश्व को आज, जो स्वयं को सदा एक शिष्य ही कहते थे, मानते थे।
अपनाया उन्होंने अपने गुरु स्वामी शिवानंद के 'सेवा, प्यार और दान' के सूत्र को।
किया विस्तार सेवा का, स्वयं अनथक सेवा करके हनुमान की तरह।
किया प्रचार प्यार का, स्वयं आदिवासी और गरीब कन्याओं और बटुकों (लड़कों) को अपने बच्चों की तरह स्नेह करके।
किया प्रचार दान का स्वयं राजसूय यज्ञ बारह वर्षों तक करके और उसमें प्रत्येक आगन्तुक व ग्रामीण को प्रसाद देकर।
किया उन्होंने उत्थान अपनी तपस्थली 'रिखिया पीठ' के आस पास के अनेक ग्रामीण क्षेत्रों का।
है आज वहाँ आध्यात्मिक और सांसारिक संपदा प्रचुरता में हर ग्रामीण के हृदय में।
जीवित हैं वे हर बच्चे के हृदय में जो उन्हें अपने बिलव्ड अर्थात् प्यारे श्री स्वामी जी कहते थे।
हैं जीवित वे हर योग साधक के हृदय में जो इस सदी के अन्त तक साधना करेंगे, वे पल–पल उनको याद करेंगें।
मैं नतमस्तक हूँ कि ऐसे गुरु के सान्निध्य और सत्संग का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ।
न केवल सत्संग प्राप्त हुआ अपितु मार्गदर्शन प्राप्त हुआ अपरोक्ष रूप से।
यही है आज मेरी सबसे मूल्यवान संपत्ति जो मैं सबके साथ बाँटना चाहती हूँ और इसीलिए अपने लेख कलमबद्ध करती हूँ।
देखती हूँ चमत्कार उनकी कृपा के पल–पल अपने जीवन में घटित होते और अपने अनुभवों से उनके श्री चरणों में और अधिक नतमस्तक होती हूँ।

अपने गुरु के श्री चरणों में मेरा नमन !

मैं तो फँसी थी दलदल में संसार की।
मैं तो थी फँसी माया और मोह के जाल में।
आप आए, मेरा हाथ थामा और दिखाई राह परमार्थ की।
आप आए, मेरा हाथ थामा और दिखाई राह ईश्वर प्राप्ति की।
क्या मैं जानती थी तुम्हारी शक्ति को, जब तक तुमने नहीं चाहा ?
क्या मैं जानती थी ईश्वर की उपस्थिति को, जब तक तुमने नहीं चाहा ?
खोले मेरे बन्धन तुमने काम, क्रोध और ईर्ष्या के।
किया मल साफ कुसंस्कारों का जो था संचित अनेक जन्मों से।
दिखाया मार्ग सेवा का, सरलतम रूप में, जैसा मुझे रूचिकर था और मेरी पारिवारिक परिस्थिति के अनुकूल।
हटाए काँटे मेरी राह के अपने प्रत्यक्ष और अपरोक्ष मार्गदर्शन से।

बनाया यन्त्र मुझे अपना और बरसाई कृपा अपनी अपरम्पार।
बना दिया मुझे सूरमा, एक साधारण स्त्री से।
दिखाया अपना अद्वितीय, अनुपम रूप अन्तर में और बाँध लिया मेरे मन को अपने श्री चरणों में।
मैं जान चुकी हूँ तुम्हारी शक्ति को, तुम्हारी करुणा को, तुम्हारी दया को।
होती हूँ नतमस्तक तुम्हारे श्री चरणों में अपने अनुभवों से, न कि किसी अंधविश्वास से।
चाहती हूँ इसीलिए कि लोग जाने कि तुम इस धरा पर ईश्वर का ही रूप हो, प्रतिरूप हो।
करें ग्रहण शरण तुम्हारी और पाएँ मुक्ति अपने जीवन के दुःखों से।
हो तुम आधार इस कलियुग के भँवर में, मैं तो जान चुकी हूँ।
अतः गुरुदेव इसीलिए अब केवल तुम्हारा ही आसरा करती हूँ।

परमहंस स्वामी सत्यानन्द का समाधि स्थल

कौन कहता है स्वामी सत्यानंद की मृत्यु हो गई ? हुई है मृत्यु सिर्फ देह की, जो उन्होंने इस जन्म के लिए धारण की थी।
हैं स्वामी जी जीवंत रूप में आज भी रिखियापीठ के कण–कण में। दिए उन्होंने दर्शन ज्योति रूप में (होली 1 मार्च, 2010 को) अपनी प्रिय शिष्या स्वामी सत्यासंगानन्द को।
किया स्वामी सत्यसंगानन्द ने उस दर्शन को कैद अपने कैमरे में, सब भक्तों के लिए।
दे रहें हैं दर्शन स्वामी जी आज भी ज्योति रूप में अपने अनेक भक्तों को।
जो पुकारते हैं उनको सच्चे मन से, करते हैं वृष्टि वे अपनी कृपा की, आज भी उन शिष्यों पर।
था उनका जीवन एक ज्वलंत उदाहरण शिष्यत्व का, मानव प्रेम का और मानव सेवा का।
किया सार्थक उन्होंने अपना मानव देह धारण करना क्योंकि देह त्याग के पश्चात् भी वे करोड़ों का मार्ग दर्शन करने में सक्षम हैं।
हो रही हैं अनेक प्रार्थनाएँ और आराधनाएँ उनके समाधि स्थल पर नित्य प्रति अनेक भक्तों, शिष्यों और संन्यासियों के द्वारा।
दिया उन्होंने दिव्य प्रेम का उपहार अपने जीवन में अनेक बालक और बालिकाओं को भुला कर धर्म, जाति और अमीरी–गरीबी का भेदभाव।
महक रही है सुगन्ध उन बच्चों की सम्पूर्ण विश्व में उनके शांति दूतों के रूप में।
बनेंगे ये बच्चे ऐसे नागरिक जो विश्वबन्धुत्व की भावना को दृढ़ करेंगे और अपने श्री स्वामी जी की महिमा का गान चिर काल तक गाएँगे।
क्या यही नहीं है परिणति इस धरा पर जन्म लेने की हर मानव की ?
क्या यही नहीं है परिणति इस धरा पर हर मानव के ईश्वरीय भाग्य की ?
चाहता हैं ईश्वर अपनी इस (मानव) कृति से यही कि वह अपने परमपिता का स्वरूप बने और उसके गुण धारण करते हुए एक दिव्य जीवन यापन करे।

कितने हैं भाग्यशाली ऐसे जो ईश्वर की इस कसौटी पर खरे उतर पाते हैं।
हम में से अधिकतर तो झूठे नाम और यश के पीछे ही सारा जीवन भागते हैं, लेना पड़े सहारा चाहे झूठ छल और कपट का।
इसीलिये तो उस परमपिता से कोसों दूर ही रहते हैं, और अपने को जन्म मरण के चक्र में बाँधते हैं।
प्राप्त करने के लिए सुख क्षणिक, उस ईश्वर के दिव्य वरदानों को ठुकरा देते हैं।
कैसी है यह विडम्बना मानव की आज कलियुग में, जो अपने अन्दर और बाहर के ईश्वर से इतना दूर है !

परमहंस स्वामी सत्यानंद का दर्शन चैत्र रामनवमी को

थी यह प्रथम नवरात्रि स्वामी जी के निर्वाण के पश्चात् रिखियापीठ में।
था हर एक भक्त का दिल बोझिल भावनाओं के आवेग से परमहंस जी के समाधि स्थल पर।
देते थे वे दर्शन हर नवमी को, अतः था वातावरण उदास इस नवमी को।
थी गायब खुशबू हवा की नवमी की प्रातः को, नहीं था कोई उत्साह वातावरण में, रसोई क्षेत्र में।
कर रहे थे सब सेवा यन्त्रवत् हर कार्यक्षेत्र में परन्तु किया स्वामी निरंजन ने हैरान हम सब को अपने सत्संग से नवमी के अन्त में।
भर गए हम सब एक नए जोश और एक नए उत्साह से स्वामी जी के श्री वचनों को सुनकर।
किया तृप्त उन्होंने सब भक्तों को अपने सौम्य सान्निध्य से।
थी आराधना दोपहर 12 बजे परमहंस जी के समाधि स्थल पर।
मिला तब वह तोहफा परमहंस जी के दर्शन का परमहंस अलखबाड़े के प्रतिबंधित क्षेत्र में।
देखा जाए तो था वह एक पुतला मोम का जो परमहंस जी का हूबहू था।
पर थे प्राण उस पुतले में हम सब भक्तों की दृष्टि में।
एक बच्ची ने जब मुझसे पूछा, ''श्री स्वामी जी तो वहाँ बैठे थे, दर्शन दे रहे थे, फिर उनकी समाधि क्यों ?''
मान गई मैं कृपा उस बनाने वाले ईश्वर की। देकर कला अपनी उस कारीगर को ईश्वर ने परमहंस जी का ऐसा पुतला बनवाया।
भर दिया नूर आकर ईश्वर ने, सर्वनियंता ने ,स्वयं उस पुतले की आँखों में, उस मूर्ति के रोम रोम में।
हो रहा था दर्शन परमहंस जी का उनके निर्वाण के पश्चात् प्रत्यक्ष रूप में।
था यह एक ऐसा चमत्कार, जिससे हर शिष्य हतप्रभ था और नतमस्तक था परमहंस जी के श्री चरणों में।
हैं परमहंस जी अपनी तपस्थली रिखियापीठ में आज भी, यह अहसास हर शिष्य को हो गया।
बढ़ गई है आध्यात्मिक ऊर्जा रिखिया पीठ की, उनकी अपरोक्ष उपस्थिति से कई गुना।

है यह मेरी श्रद्धांजलि अपने सद्गुरु के श्री चरणों में जो जीवित हैं आज भी न केवल रिखिया पीठ में, परन्तु अपने हर भक्त के दिल में अपने स्नेह और करुणा के प्रभाव से।
पाया जो मैंने उनसे वह शब्दों में बाँधना कठिन है, असंभव है; फिर भी एक प्रयास करती हूँ और अपने भावों के एक क्षुद्र अंश को कलमबद्ध करती हूँ केवल और केवल परहित के लिए।

दानदाताओं की सूची

1)	अदित अग्रवाल	–	10,000
2)	रजनी गोयल	–	4000
3)	एकता महिला मण्डली, आशीष नगर एवं योगसाधना एवं सांस्कृतिक केन्द्र, मैत्रीनगर	–	1100
4)	स्निग्धा गोयल	–	1100
5)	प्रमिला	–	1100
6)	भव्या गुप्ता	–	1000
7)	गौतम	–	550
8)	कुसुम तिवारी	–	501
9)	मोहन स्वरूप बंसल	–	500
10)	अशोक कुमार गुप्ता	–	500
11)	अश्विनी गुप्ता	–	500
12)	सतीश लोरिया	–	500
13)	जनक पब्बी	–	500
14)	बी० एन० भौमिक	–	300
15)	डा० ए० वी० देशपांडे	–	201
16)	ए० एन० सिन्हा	–	200
17)	आर० सी० सिन्हा	–	200
18)	सुषमा सिंह	–	100
19)	अनिल मित्तल	–	100
20)	एच० एन० शर्मा	–	100
21)	लखन लाल सोनी	–	100
22)	पी० सी० सोनी	–	101
23)	एस० एल० बेरी	–	100
24)	अनुभव	–	100

आपका अल्प अथवा वृहद दान सहर्ष स्वीकार्य है।